बहुतेरा चाहा कि ज़ाहिर न हो, पर ज़ाहिर हो ही गई, और बंगाले का सूबदार शुजा और गुजरात का सूबदार मुराद दोनों ने बादशाह का खिताब ले ले कर दिल्ली की तरफ़ कूच किया। और मक्कार औरंगज़ेब ने ज़ाहिर तो किया कि हमें राजकाज से कुछ इलाक़ा नहीं, हम तो मक्के जाने वाले हैं। सिर्फ़ काफ़िर* दारा और उसके वज़ीर जसवंत सिंह को दबाने के इरादे से मुराद का साथ देंगे।

इस वक़्त शाहजहान अच्छी तरह से चंगा हो गया था, पर तब भी बेटों में लड़ाई नहीं बंद हुई। बनारस के पास दारा और उस के मददगार जयसिंह से शिकस्त खा करके शुजा फिर बंगाले में लौट गया। इधर जब दाराने सुना कि मुराद और औरंगज़ेब मिल कर लड़ने को चले आते हैं, तो जसवंत सिंह को उनसे लड़ने के वास्ते भेजा। लेकिन जसवंत सिंह उज्जयिनी के पास शिकस्त खा कर अपने राज जोधपुर में भाग गया। फिर दारा खुद लड़ने को गया और आगरे के पास लड़ाई में शिकस्त खा कर दिल्ली को भाग आया। इधर औरंगज़ेब इन फ़तहों से फूला हुआ आगरे गया, और बापको क़ैद करके क़िले में रक्खा। पस शाहजहान हरचंद १६६६ ई० तक ज़िन्दा रहा, लेकिन बादशाहत उसकी सन १६५८ ही में खतम हो गई,

शाहजहान के दरबार में एक अजीब चमक दमक थी। उसने सात करोड़ रुपये की लागत का क़िस्म क़िस्म के

*धर्म के बारे में दारा का स्वाधीन मत था, इसवास्ते अंधभक्त मुसलमान लोग उसे काफ़िर कहते थे।

जवाहिरों से सज कर एक तख़्त-इ-ताऊस बनवाया था, और मस्जिद वग़ैरह बहुतेरी नफ़ीस नफ़ीस इमारतें बनवाई थीं। इन में से ताजमहल एक ऐसी उम्दे इमारत है कि दुनिया में अपना जोड़ा नहीं रखती। यह इमारत आगरे में है, और शाहजहान की प्यारी बेगम मुम्मताज़ महल का रौज़ा है। इसके राज में क्या हिन्दू और क्या मुसल्मान सब रय-य्यत बादशाह के न्याय से राज़ी थी। उसकी गद्दी पर से उतरने के वक़्त ख़ज़ाने में क़िस्म क़िस्म के जवाहिर और चौदह करोड़ के लगभग रुपये मौजूद थे।

औरंगज़ेब।

१६५८—१७०७।

औरंगज़ेब और मुराद दोनों ने मिलकर दारा का पीछा किया। रास्ते में दग़ाबाज़ औरंगज़ेब ने क्या किया कि साफ़-दिल मुराद को क़ैद कर ज़ंजीर डाल गोवालियर के क़िले में भेज दिया, और आप दिल्ली में जा अपने बादशाह होनेका ढिंढोरा पिटवा दिया (१६५८), और ख़िताब अब 'आलमगीर' का लिया।

औरंगज़ेब ने सोचा कि जब तक दारा और शुजा बचे रहेंगे, तब तक अमन की सूरत नहीं दिखाती, बारे उनके मरने की कोई तदबीर सोचा चाहिये। दारा, औरंगज़ेब के पीछा करने के डर से पहले तो मुलतान को भागा, फिर वहां से एक एक कर कई एक राजपूत

सरदारों के पास क्रम से जा जा कर उसने पनाह चाही। निदान जून के (जो कन्दहार के पास है) हाकिम ने दग़ा से दारा को गिरफ़्तार कर औरंज़ेब के हवाले किया। निर्दयी औरंगज़ेब ने अपने बड़े भाई के पांवों में ज़ंजीर डाल के भोंडे बेभूल के हाथी पर बिठला दिल्ली की गलियों और कूचों में फिरवा कर इस्लाम के मज़हब छोड़ने की तुहमत लगा कत्ल करवा डाला, और झूठा ग़म दिखला कर भाई के कटे सिर पर आंसू के कई एक बूंद टपकाये! इसके पहले शुजा एकबार और बंगाले से चला था, लेकिन कजवार की लड़ाई में शिकस्त खाकर फिर बंगाले में लौट गया। इस वक्त बादशाह ने अपने बेटे मुहम्मद और सिपह-सालार मीर जुमला को शुजा से लड़ने के वास्ते रवाना किया। फिर थोड़े ही दिनों के बाद शहज़ादा मुहम्मद बाप की फ़ौज से अलग हो कर शुजा से जा मिला, और शुजा की बेटी को ब्याह लेने पर उससे बिगड़ बैठा, और फिर जब बाप की फ़ौज में आ मिला तो गोवालियर के क़िले में क़ैद किया गया। इधर शुजा मीर जुमला से हार कर, पहले ढाके और फिर अराकान में भागा, और वहां के राजा के हाथ बाल बच्चों समेत मारा गया। दारा का बेटा सुलेमान भी बाल बच्चों के साथ गोवालियर के क़िले में क़ैद किया गया, और थोड़े ही दिनों के बाद मर गया। मुराद भी १६६१ ई० में एक झूठे अपराध लगा कर कत्ल करा दिया गया। अत्याचारी और निठुर औरंगज़ेब इस तौर से अपने सब भाई भतीजों को मार कर आप निष्कंटक राज करने लगा।

अब वीर और साहसी मीरजुमला ही एक बच रहा था कि जिसका बादशाह को बड़ा खटका रहता था। सो वह भी १६६३ ई॰ में आसाम फतह कर लेने के बाद और चीन पर जो उस ने चढ़ाई की थी उस में नाकाम हो कर ढाके में लौट आने पर इस दुनिया से गुज़र गया।

इस वक़्त औरंगज़ेब एकाएक एक सख़्त बीमारी में पड़ा और लोग उस की जगह हासिल करने के लिये साज़िशें करने लगे। कोई यह चाहता था कि शाहजहान फिर तख़्त पर बैठे, और किसी की यह सलाह थी कि औरंगज़ेब का बेटा उस का जानशीन हो लेकिन औरंगज़ेब की अक़्ल, हिम्मत, और ज़ोर के बाइस सब साज़िशें जी की जी में दबी दबाई रह गईं। चंगा हो जाने पर बादशाह आब-हवा तबदील करने के इरादे से कश्मीर को रवाना हुआ।

इस के बाद औरंगज़ेब को मरहटों की तरफ़ ध्यान देना पड़ा। हिन्दुस्तान का नक़्शा निकाल कर दखन के पच्छिम किनारे सूरत शहर से एक कल्पित रेखा पूरब तरफ़ नागपुर के कुछ पूरब हिस्से तक खेंचो, और वैसी ही एक दूसरी रेखा गोआ शहर से चन्दा शहर तक खेंचो, इन दोनों रेखाओं के बीच की जगहों को महाराष्ट्र देश समझ लो। सह्य पहाड़ इसी देश में है। नर्मदा, ताप्ती, गोदावरी, भीमा, कृष्णा नदियां भी यहीं किसी न किसी हिस्से में बहती हैं। इस पहाड़ी पर उपजाऊ मुल्क के रहने वाले नाटे नाटे, मज़बूत, मिहनती, और बड़े चालाक होते हैं।

मरहटों के पुराने हाल कुछ नहीं मिलते हैं। मुग़लों के

वक़्त में भी इनका कोई ख़ास राजा न था। एक एक आदमी छोटी छोटी जगहों पर हुकूमत करता था। अहमदनगर और विजयपुर के राजाओं की फ़ौजों में मरहटे बहुत भरती हुआ करते थे। घुड़सवारी के फ़न में होशयार होने के सबब से मुसलमानी सलतनतों में भी ये फ़ौजी बड़े बड़े ओहदों पर मुक़र्रर होने लगे। इसी तरह यह क़ौम बहादुर और दिलेर होती चली।

अहमदनगर के वाली मलिक अम्बर के कारकुनों में मल्लजी भोंसला और यदुराव नाम दो अच्छे अच्छे घराने के मरहटे नौकर थे। इसी यदुराव की बेटी जीजीबाई के साथ मल्लजी के बेटे शाहजी का ब्याह हुआ, और इसी जीजीबाई से शाहजी का दूसरा बेटा शिवाजी १६२७ ई० में पैदा हुआ। दादाजी पन्थ नाम एक ब्राह्मण शिवाजी का गुरु था। इस ने शिवाजी को मरहटों की ज़रूरी सब बातें सिखलाई थीं, लेकिन लिखना पढ़ना कुछ भी नहीं बताया था। शिवाजी हर्फ़ तक नहीं पहचानता था। उस को हिन्दू धर्म पर बड़ी भक्ती थी। वह पुराणों के वीरों के हाल बहुत ही जी लगा कर सुना करता था। मुसलमानों से बहुत नफ़रत करता था। उसने शिकार खेलने के वास्ते पहाड़ों में अक्सर जा जा कर अपने तईं वहां के पहाड़ी मुल्कों से वाक़िफ़ कर लिया था। इस वक़्त की यह वाक़िफ़कारी उसे आगे बहुत काम आई।

शिवाजी ने कमसिनी ही में इतना ज़ोर हासिल कर लिया

कि छलबल से विजयपुर के राजा के कई एक गढ़ और कोकन देस का उत्तर हिस्सा दखल कर लिया। इस बात से विजयपुर के राजाने रंज हो कर शिवाजी के बाप शाहजी को क़ैद कर लिया। शिवाजी बादशाह शाहजहान की शरण में जा कर उसकी मदद से बाप को क़ैद से छुड़ा लाया, पर फिर साबिक़ दसतूर अपना राज बढ़ाने की तदबीर करने लगा। फिर १६५५ ई॰ में शाहजहान के दखल किये हुए दखन के कुछ हिस्सों में शिवाजी ने लूट मार करना शुरू किया। शाहज़ादा औरंगज़ेब इस वक़्त गोलकुंडे में लड़ रहा था। शिवाजी ने जब देखा कि औरंगज़ेब ने लड़ाई में फ़तह पाई है तो चट अपने कुसूर के वास्ते मुआफ़ी मांग ली। औरंगज़ेब मुआफ़ कर के तख़्त दखल करने को १६५८ में दिल्ली की तरफ़ रवाना हुआ। इधर शिवाजी ने विजयपुर के राजा को मारे लड़ाइयों के तंग कर डाला। निदान राजा ने लाचार हो कर शिवाजी के फ़ाइदों की शर्तें क़बूल कर के सुलह कर ली। इस सुलह से शिवाजी पूना के पास पास कोकन देस के एक बड़े हिस्से का स्वाधीन राजा हुआ।

१६६२ ई॰ में बादशाह की अमलदारी में शिवाजी के लूट मार करने के सबब से दखन का सूबदार शाइस्तेखां उसे सर करने को भेजा गया। शाइस्तेखां शिवाजी को शिकस्त दे पूना दखल कर उसी के मकान में रहने लगा। शिवाजी ने सिंहगढ़ में जा कर पनाह ली। एक दिन उसने रात को किसी की बारात के साथ पूना में पहुंच कर शाइस्तेखां के सब बालबच्चों को मार डाला, शाइस्तेखां ने भाग कर अपनी जान बचाई।

इस के बाद शिवाजी ने दूर दूर पर लूटमार करना शुरू किया, और चार हज़ार सवारों के साथ औरंगज़ेब के दखल किये हुए सूरत बन्दर में जा कर बहुत कुछ धन सम्पत्ति लूटी। औरंगज़ेब के जंगी जहाज़ों को लूट कर समुद्र में भी वह अपना अधिकार बढ़ाने लगा।

जब औरंगज़ेब ने सुना कि शिवाजी ने हज करने को मक्के जाने वालों के जहाज़ लूट लिये हैं, राजा का खिताब लेकर स्वाधीनता इख़्तियार कर ली है, सिक्कों में अपना नाम खुदवाया है, तो खूब ही खफ़ा हुआ, और राजा जयसिंह और दिल्ली के खां को बहुत सी फ़ौजें साथ दे उसी सर करने को भेजा। जब इन सिपह-सालारों ने शिवाजी के दो बड़े बड़े क़िले खाली करा लिये, तो शिवाजी ने लड़ना मुनासिब न समझ कर राजा जयसिंह से जा कर मुलाक़ात की। राजा जयसिंह ने उस की अच्छी खातिरदारी की, और बादशाह से सुलह करा दी। इस के बाद शिवाजी ने जयसिंह के साथ बिजयपुर के राजा के बरखिलाफ़ कूच किया। फिर लालच के बस हो कर वह दिल्ली को गया। दरबार में जब औरंगज़ेब ने उस की पूरी इज़्ज़त न की तो रंज हो कर बे इजाज़त दरबार से उठ गया। औरंगज़ेब ने इस बात के वास्ते क़ैद कर के उस को दिल्ली ही में रक्खा लेकिन चालाक शिवाजी पहरुओं की आंखों में धूल डाल कर निकल भागा, और सन्यासी के भेस में ८ महीनों के बाद अपनी राजधानी रायगढ़ में पहुंचा (१६६६)।

जब शिवाजी इस तौर पर दिल्ली से भाग आया, तब

औरंगज़ेब ने उस को फिर अपने क़ाबू में लाने के वास्ते उस के सब कुसूर मुआफ़ कर दिये, उस का राजा का ख़िताब लेना मंज़ूर कर लिया, और एक जायगीर मुक़र्रर कर दी। मगर अब शिवाजी कब उस के धपले में आता है? १६६८ से उस ने विजयपुर और गोलकुंडे के राजाओं से ख़िराज लेना शुरू किया, और १६६८ और १६६९ दो बरस में अपनी नई सल्तनत का इन्तिज़ाम किया।

जब बादशाह ने देखा कि शिवाजी मुग़ालते में न आया, तो खुल्लमखुला लड़ने की तय्यारी की। बरस दो एक तक लड़ाई चली। इन लड़ाइयों में शिवाजी अक्सर फ़तहयाब हुआ किया। बादशाह के कई एक क़िले ख़ाली करा लिये, सूरत को लूट लिया, और सूबे ख़ानदेश में एक फ़साद मचा कर वहां से 'चौथ' यानी राज की आमदनी के चौथे हिस्सेके तहसीलने का दस्तूर निकाला। १६७२ ई॰ में शिवाजी के सर करने को बादशाह ने कुछ फ़ौजें और भेजीं। मगर वे भी शिवाजी से लड़ कर फ़तह न उठा सकीं। शिवाजी के आदमियों की हिम्मत इन फ़तहों की ख़ुशियों से और दूनी हो गई।

इस वक़्त अफ़ग़ानिस्तान के उत्तर-पूरब की तरफ़ के पहाड़ों की रहने वाली क़ौमों से बादशाह को लड़ना पड़ा। उसके बाद दिल्ली के पास ही एक बलवा हुआ। वहां एक ईश्वर के माननेवाले सतनरामी नाम एक हिन्दुओं का फ़िर्क़ा बसता था। एक अदनी बात के लिये उस फ़िर्क़े के एक भक्त से और बादशाह की फ़ौज के एक सिपाही से कुछ

खटपट हो जाने के सबब से बढ़ते बढ़ते एक बड़ी लड़ाई हो गई। पहले तो सतनरामियों ने कई एक बार फ़तहें हासिल कीं, लेकिन फिर बादशाह की बेशुमार फ़ौजें आने पर उन्हों ने शिकस्त खाई, और फ़ौजें उन की सारी तितिर बितिर हो गई।

औरंगज़ेब बड़ा ही कट्टर मुसल्मान था। अक्बर ने हिन्दुओं की जिन जिन रस्मों और रिवाजों को अपने यहां जारी किया था, इसने उनको उठा दिया। मुसल्मानों के सिवा और और सब मज़हबवालों से जिज़िया नाम जो महसूल लिया जाता था उसे अक्बर ने मौक़ूफ़ कर दिया था, लेकिन इस ने फिर जारी किया। इससे हिन्दुओं का फ़िर्क़ा बहुत ही नाराज़ हो गया, और हिन्दू मुसल्मान के आपस की लाग हद से ज़ियादा बढ़ गई। राजपूत लोग मुग़लों में बहुत हिल मिल गये थे, लेकिन इस वक़्त वह भी बिगड़ गये, और दखन के हिन्दू मरहटों से जा मिले (१६७७)।

इस वक़्त औरंगज़ेब से आम बिगाड़ होने का एक सबब और हुआ। जोधपुर का राजा जसवंतसिंह बादशाह ही के काम के वास्ते काबुल गया था। वहां वह गुज़र गया। दुर्गादास नाम एक अमीर राजपूत जसवंतसिंह की स्त्री और लड़कों को देस लिये आता था। रास्ते में अटक के पास बादशाह ने उसको रोका, लेकिन दुर्गादास ने किसी हिक्मत से बिधवा रानी और उस के लड़कों का भेस बदलवा कर देस को रवाना कर दिया, और आप बहुत दिनों तक बादशाह की फ़ौज से लड़ता भिड़ता रहा।

निदान जसवंतसिंह के बालबच्चों से इस बुरे तौर पर पेश आने और जिज़िया तहसीलने के सबब से अनक़रीब सब के सब राजपूत बादशाह से नाराज़ हो कर बिगड़ बैठे। पहले पहल उदयपुर के राना ने दो बार बगावतें कीं, और दोनों बार शिकस्तें खाईं। फिर दुर्गादास ने बादशाह के छोटे बेटे अक्बर को तख़्त दिला देने का लालच दे उस से..डंका बगावत का बजवाया। उस समय अक्बर के पास ७० हज़ार सिपाही थे। उस ने इस फ़ौज के साथ बादशाह के विरुद्ध, जो अजमेर में उस वक़्त था, कूच किया। लेकिन चतुर औरंगज़ेब ने ऐसी चालाकी की कि एक एक कर सारी फ़ौज को बहका कर अपने पंजे में कर लिया। अक्बर अकेला पड़ गया, और जब उसने अपने तईं बचाने की कोई तदबीर न देखी, लाचार भाग कर मरहटों की शरण ली (१६८१)। इस के बाद भी उदयपुर के राना और दूसरे दूसरे राजपूत, और बादशाह के दरमयान लड़ाइयां हुआ कीं। आख़िरकार सुलह हुई, लेकिन फिर कभी औरंगज़ेब और राजपूतों में दिली मेल न हुआ।

जब औरंगज़ेब इधर इन बखेड़ों में उलझा हुआ था, उधर शिवाजी ने मौक़ा पाकर दखन में बहुतेरी जगहें दख़ल कर लीं, अपने यहां के अमले कारकुनों और फ़ौजी अफ़सरों के ओहदों के फ़ारसी नाम उठा कर संस्कृत के जारी किये। १६७५ में उस की फ़ौज ने गुजरात लूटा, और १६७६ में उस ने आप मैसूर में जा कर मौरूसी जायगीर को दख़ल किया। १६७९ में जब बादशाह के सेनापति

दिल्ली के खां ने विजयपुर के राज पर चढ़ाई की, तब शिवाजी ने विजयपुर के राजा से मिल कर किसी जुगत से बादशाह की फ़ौजों को हंटा के तितिर बितिर कर दिया। इस से शिवाजी का बड़ा फ़ायदा हुआ। फिर १६८० में शिवाजी ५३ बरस का हो कर परलोक को सिधारा।

शिवाजी बुद्धिमान, तेजस्वी, मिहनती, चतुर, और बड़े हौंसलेवाला था। इस ने एक अदनी हालत से इतनी तरक्क़ी की, और जिन मरहटों की क़ौम का अक्सर लोग नाम भी नहीं जानते थे उन का नाम इतना ऊंचा किया कि अब उसी क़ौम की इज़्ज़त हिन्दुओं की अन्क़रीब और और सब क़ौमों से ज़ियादे है। हिन्दूधर्म का इसे बड़ा ही पास था।

शिवाजी के बाद उस के बड़े बेटे शंभूजी ने बाप का राजसिंहासन तो पाया, मगर बाप के गुणों में से एक को भी न पाया। यह निठुर निर्विवेकी, और विषयी था। शिवाजी के बनाये अच्छे आईन और क़ाइदों के जारी नहीं रहने से इस के वक़्त में फ़ौजों का काम सिर्फ़ मुल्कों का लूटना रह गया था।

उदयपुर के राजा से सुलह हो जाने पर औरंगज़ेब निश्चिन्त हो गया। तब उस ने दक्खन की तरफ़ दिल दिया और १६८३ में ख़ुद बुर्हानपुर में छावनी डाल अपने बेटे मुअज़्ज़िम को कोकन का मुल्क लूटने भेजा। इधर के मुआमले तय हो जाने पर विजयपुर पर चढ़ाई करने के इरादे से वह अहमदनगर को गया। कोकन के लूटे जाने से शंभूजी रंज हो कर चुपचाप बुर्हानपुर को गया और उसे

लूट के और जला के ख़ाकस्याह कर चला आया। फिर जब बादशाहने विजयपुर के बरख़िलाफ़ कूच किया, तो शंभूजी ने दखन के उत्तर हिस्सों को लूटना शुरू किया। बादशाह ने जब सुना कि शंभूजी ने गोलकुंडे के राजा से सुलह कर ली है, तो उस ने विजयपुर का जाना मौकूफ़ रख पहले गोलकुंडे पर चढ़ाई की, और उसे अच्छी तरह लूट-मार कर राजा को सुलह करने के वास्ते मजबूर किया। फिर विजयपुर दख़ल हुआ। इस के बाद औरंगज़ेब ने दग़ाबाज़ी से सुलह की शर्तों को तोड़ कर गोलकुंडे के राजा को तबाह किया, और मैसूर में घुस कर मरहटों की जायगीर ज़ब्त कर ली, और अपनी सल्तनत का हद कुमारिका तक पहुंचा दिया।

इस के बाद बादशाह शंभूजी को कोंकन से कैद कर लाया, और मुसलमान होने का हुक्म दिया। इस बात का कड़ा जवाब देकर नामंज़ूर करने के बाइस शंभूजी का सर काट लिया गया (१६८८)। शंभूजी के बाद उस का बेटा साहूजी, जो अभी बिल्कुल बच्चा था, राजा हुआ। उसका सौतेला भाई राजाराम राजकाज चलाने लगा। इस वक़्त मुग़लों ने रायगढ़ के क़िले को दख़ल कर साहू को कैद किया। राजाराम ने वहां से कूच कर कर्नाटक में जिंजी क़िले को दख़ल किया और राजा का ख़िताब लिया। औरंगज़ेबने उस क़िले के भी लेने के वास्ते ज़ुलफ़िक़ारख़ां नाम सेनापति को रवाना किया (१६९२)।

इधर राजाराम ने शान्ताजी और दानजी नाम दो मरहटे

सरदारों को मुल्क लूटने और चौथ तहसीलने को रवाना किया। विजयपुर और गोलकुंडे के बहुतेरे आदमियों ने इनका साथ दिया।—पस दखन में इस वक्त यह हाल था कि जहां देखो वहीं एक आफ़त मची हुई है,—कहीं लूट है कहीं खसोट है, कहीं गांव के गांव में आग लगी है। इस वक्त मरहटी फ़ौजको तलब मुक़र्रर न थी। लूट ही खसोट से वह अपना गुज़ारा करती थी। मरहटे मुग़लों से सामना करके नहीं लड़ते थे, इससे मुग़लों को उन के सर करने का मौक़ा नहीं मिलता था। शान्तजी और दानजी ने क्या किया कि धीरे धीरे ज़ुलफ़िक़ारखां के लश्कर की बग़ल में पहुंच कर उसकी रसद पहुंचाने की राह रोक दी। बादशाह ने डर कर जल्द ही अपने बेटे कामबख़्श को फ़ौज के साथ जिंजी क़िला दखल करने के वास्ते रवाना किया ज़ुलफ़िक़ार और कामबख़्श के आपस में मेल नहीं रहने के सबब से बहुत दिनों तक कोई काम न निकला। निदान १६९८ में ज़ुलफ़िक़ार ने जिंजी को दखल किया। मगर राजाराम इसके पहले ही सितारा जा चुका था।

इस वक्त मरहटी फ़ौजों के आपस में बिगाड़ होजाने के सबब से उन्हों ने शान्तजी को मार डाला। राजाराम ने दानजी से मिल कर बहुत सी फ़ौजें इकट्ठी कीं। दखन के उत्तर हिस्से में तमाम लूट मार और चौथ वसूल करना शुरू किया। औरंगज़ेबने भी इधर ज़ुलफ़िक़ार को मरहटी फ़ौजों के बरखिलाफ़ रवाना किया, और आप उनके क़िलों के लेने को रवाना हुआ। १७०० ई० में सितारा दखल किया

इसके कुछ पहले राजाराम गुज़र गया, और उसका बेटा २रा शिवाजी बाप की जगह पर बिठाया गया। परन्तु यह अभी बिलकुल बच्चा था, इस सबब से सल्तनत का इन्तिज़ाम उसकी मा ताराबाई चलाती थी। मुग़लों ने अभी तक लड़ाई मौक़ूफ़ नहीं की थी। औरंगज़ेब ने कई एक बड़े बड़े क़िले दख़ल किये,—उधर मरहटे भी उन्हें फिर ले लेने में ग़ाफ़िल न थे,—इस समय मरहटी फ़ौज इतनी ज़ोरावर हो गई थी, और इतना फ़साद मचाये रहती थी कि मुग़लों को उनके डर से सदा होशयार और चौकन्ना रहना पड़ता था। मरहटे आमने सामने कभी नहीं लड़ते थे—ये अक्सर धोखा देकर चालाकी के साथ मुग़लों की थकी हुई फ़ौजों को लूट लिया करते थे। इसी तरह बरस बीस एक तक मरहटों से लड़ते भिड़ते औरंगज़ेब के नाकों दम आ गया। ख़ज़ाना ख़ाली हो गया। फ़ौजोंकी मुक़र्रर तलब चुकानी मुशकिल पड़ गई। राजपूतों से तो अक्सर लड़ाई हुआ ही करती थी, इधर आगरे के पास जाटों से एक लड़ाई खड़ी हुई। इन्हें ही सब बाइसों से औरंगज़ेब ने मरहटों के पास सुलह का पैग़ाम भेजा। मरहटे इसकी इस बुरी हालतको मालूम कर तन बैठे,—शर्तें सुलह की कड़ी कड़ी रखनी चाहीं। औरंगज़ेब ने घमंड से सुलह तो नहीं क़बूल की, पर उनके जब्र और ज़ुल्मों को गवारा कर लिया, आख़िरश अहमदनगर में जाकर १७०७ ई० में ८९ बरस का हो कर इस जहान से रुख़सत हो गया।

औरंगज़ेब दिलावर, अक़्लमंद, चालाक और कुछ इन्सा-

फ़क्र भी था। मुसल्मानी मज़हब में बहुत पक्का होने के सबब से मुसल्मानों ने उसकी बड़ी तारीफ़ें लिखी हैं। इसी के अमल में मुग़लों की सल्तनत ख़ूब चमकी, और फिर इसी के वक़्त में उसकी तबाही के भी सामान बंधे। यह शक्की इतना था कि किसी का इतबार नहीं करता, और इसी सबब से इस का न कोई इतबार करता, और न कोई इसे चाहता। जिज़िया के जारी करने से और हिन्दुओं को सल्तनत के कामों से महरूम रखने ही से सब हिन्दू इस से नफ़रत करते थे। यह अपने बाप से जिस बुरे तौर से पेश आया था उस के लिये वह मरते मरते समय तक पछताया किया।

छठा अध्याय।

बहादुर शाह।

१७०७—१७१२।

औरंगज़ेब के तीन बेटे थे—मुअज़्ज़म, आज़म और कामबख़्श। उसने मरते वक़्त तीनों बेटों को अपना सारा राज बांट लेने कहा था, लेकिन ऐसा होने नहीं पाया। उसके मरने पर तीनों बादशाही ताज पहनने के लिये ख़्वाहां हुए, और इसी से तीनों ने आपस में लड़ने की भी तय्यारियां कीं। निदान लड़ाई में और सब तो मारे गये,—सिर्फ़ बड़ा बेटा मुअज़्ज़म 'बहादुरशाह' (१ला शाह आलम) का ख़िताब लेकर बादशाह हुआ।

यह पहले ही कहा जा चुका है कि शंभूजी के बेटे साहू को मुग़लों ने क़ैद कर लिया था। औरंगज़ेब के मरने के बाद आज़म ने उसे छोड़ दिया था। साहू जब दखन में गया तो बहुतेरे इसे राजका असल वारिस ख़याल कर उस की तरफ़ हुए। इस पर मरहटों में दो दल हो गये। बहादुरशाह ने भी साहूका साथ दिया, और सुलह कर ली। सुलहनामे की शर्त यह हुई कि मरहटों को जो चौथ दिया जायगा, उसे मुग़ल ही वसूल करेंगे, मरहटे ख़ुद न तहसीलें। बहादुरशाह का असल मक़्सद यह था कि लड़ाई झगड़े निबटें और सारे मुल्कमें अमन हो। इसी ख़याल से उसने राजपूतों

से भी सुलह कर ली। परन्तु इतना करने पर भी उसे फिर एक लड़ाई में उलझना ही पड़ा।

ईसवी पन्द्रहवीं सदी के अख़ीर में बाबर की सल्तनत के समय पंजाब में "नानक" नाम एक शख़्सने एक नया मत जारी किया था। इस मत के माननेवालों को सिक्ख (शिष्य) और धर्मयाजक को 'गुरू' कहते हैं। इस मत की असल अद्वितीय ईश्वर की उपासना है। क्या हिन्दू क्या मुसल्मान सब ही इस मज़हब में आ सकते हैं। पस इस मज़हब में वर्णविचार नहीं है, मगर गोवध और गोमांस भक्षण निहायत ही मना है। सिक्खों को किसी शकल का एक टुकरा लोहा अपने बदन में रखना ज़रूर है। १६७५ ई० में १०वें गुरू गोविन्द* ने इस मत को हरतरह से पूरा कर दिया। सिक्ख लोग पहले दुनियावी बातों से बिल्कुल तर्क थे। मगर जब मुग़ल उन पर बहुत जुल्म करने लगे, तब इनसे न रहा गया। सब के सब सिपाहियाना भेस रखने लगे, और मुसल्मानों को अपना जानी दुश्मन समझ मुग़लों की सल्तनत में लूट मार करने लगे। बहादुर शाह के ज़माने में 'बंधु' नाम गुरू को अपना सरदार बना सिक्खों ने पंजाब के पूरब से लूट मार करना शुरू किया। बहादुर शाह ने वहां जाकर उन लोगोंको हराया, और पहाड़ों की तरफ़ निकाल दिया, लेकिन इसके थोड़े ही दिनों के बाद लाहोर में लौट आकर १७१२ ई० में अपना चोला छोड़ दिया। इसने कुल ५ बरस बादशाहत की।

---

* गुरु गोविन्द की जन्म भूमी पटना है।

जहांदार शाह।

१७१२—१७१३

बहादुर शाह के चार बेटे थे। दूसरा बेटा अज़ीमुश्शान औरों से लाइक़ था। परन्तु उसे तख़्त न मिल सका। वज़ीर आज़म ज़ुलफ़िक़ारअली की मदद से बड़ा बेटा "जहांदार" का ख़िताब लेकर तख़्त पर बैठा। अज़ीमुश्शान वग़ैरह भाई और भतीजे सब के सब क़त्ल करा दिये गये। सिर्फ़ अज़ीमुश्शान का बेटा फ़र्रुख़सियर बंगाले में रहने के सबब से बच गया।

जहांदार निहायत ही नालाइक़ और ऐयाश था। उसे नाम के लिये बादशाह बनाकर ख़ुद बादशाहत करने के लिये ज़ुलफ़िक़ार ने उसकी मदद की थी। अब घमंड से उसके सब दुश्मन हो गये, और इसी बिगड़े वक़्त में एक ज़ोरावर दुश्मन भी आ पहुंचा। बिहार का हाकिम सय्यिद हुसैन और इलाहाबाद का हाकिम सय्यिद अबदुल दोनों भाइयों की मदद लेकर फ़र्रुख़सियर ने कुछ फ़ौजें जमा कीं, और तख़्त दख़ल करने के इरादे से दिल्ली की तरफ़ कूच किया। आगरे के पास जहांदार से लड़ाई हुई—पहली ही लड़ाई में जहांदार और ज़ुलफ़िक़ार दोनों पकड़े गये, और मारे गये (१७१३), और फ़र्रुख़सियर दिल्ली का बादशाह हुआ।

फर्रुखसियर।

१७१३—१७१८।

फर्रुखसियर ने तख़्त पर बैठते ही सय्यिद अब्दुल्लाह को वज़ीर आज़म और सय्यिद हुसैन को सेनापति मुक़र्रर किया। फर्रुखसियर इन दोनों भाइयों का इहसानमंद था, इस सबबसे इनके आपस में प्रीति नहीं होने पाती थी राजकाज का सारा बंदोबस्त इन ही दोनों के हाथ रहने की वजह से दरबार के उमरा कनमनाने लगे। निदान सय्यिदों के मारने की साज़िशें होने लगीं। सय्यिदों ने भी बादशाह को धमका दिया। आख़िरकार बादशाह और सय्यिदों का मेल बिल्कुल ज़ाहिरी रह गया। फिर इसके बाद हुसैन दखन का सूबदार मुक़र्रर हुआ।

इस वक़्त सिक्खों के पहाड़ से उतर कर पंजाब में बहुत फ़साद मचाने पर एक मुग़ल सेनापति वहां जा कर उन्हें शिकस्त दे उनके सरदार बन्धुके साथ बहुत से सिक्खों को दिल्ली में क़ैद कर लाया। वहां सबके सब क़त्ल किये गये, और बन्धु बड़ी बड़ी बिपतों के साथ मारा गया। इतना करने पर भी सिक्ख सर न हुए।

बहादुर शाह के वक़्त में मुग़ल और मरहटों के दरमियान जो सुलह हुई थी, वह थोड़े ही दिनों के बाद तोड़ दी गई, और मरहटों के आपस की फूट रोज़ रोज़ बढ़ती चली, इसी सबब से दखन में तमाम हलचल जों की तों मची हुई थीं। हुसैन ने दखन में जा कर जब देखा कि अमन का

कोई डौल नहीं है, और बादशाह की साज़िश से अपने भाई की हिफ़ाज़त के वास्ते अपना दिल्ली जाना ज़रूरी समझा तो जल्दी में साहू से जैसी तैसी एक सुलह कर ली। परन्तु बादशाह ने अपनी बेइज़्ज़ती समझ कर इस सुलहनामे को तसलीम नहीं किया। बादशाह को हरदम फ़िक्र रहा करती कि ये सय्यिद किस ढंग से मारे जावें, परन्तु आख़िरश सय्यिदों ही ने उसे मार डाला। (१७१९)

फ़र्रुख़सियर ने मारवाड़ के राजा अजितसिंह की बेटी से शादी की थी। इस शादी के वक़्त अंगरेज़ों को सौदागरी के कई एक इख़तियार हाथ लगे।

मुहम्मद शाह।

१७१९—१७४८।

फ़र्रुख़सियर को मार कर सय्यिदों ने रीफ़उद्दर्जात और रफ़ीउद्दौला को तख़्त पर बिठाया, परन्तु दोनों के दोनों थोड़े ही थोड़े दिनों के अन्दर इस दुनिया से उठ गये। फिर उन्हों ने रोशन अख़तर को तख़्त दिया, जिस ने अपना लक़ब "मुहम्मद शाह" रक्खा।

सय्यिदों का इस क़दर इख़्तियार देख कर कितने ही लोग इन के दुश्मन हो गये थे। चींक़िलीचख़ां भी जिसका बाप औरंगज़ेब के नामी तूरानी सरदारों में था, उन का दुश्मन हो गया। चींक़िलीचख़ां "निज़ाम-उल-मुल्क" और आसिफ़जाह नामों से ज़ियादे मशहूर है। फ़र्रुख़सियर

के वक़्त में यह दखन का सूबदार था। हुसैनअली ने इससे सूबदारी छीन ले कर सिर्फ़ मालवे की हाकिमी सुपुर्द की। इस बात के वास्ते आसिफ़ज़ाह के दिल की बड़ा ही क़लक़ था। निदान १७२० ई० में इसने डंका बग़ावत का बजाया और दखन में अपनी सल्तनत क़ायम कर ली—हुसैनअली की फ़ौज बहुत लड़ी, पर उसे हरा न सकी।

सय्यिदों के मारने की साज़िश में मुहम्मद शाहको शरीक समझने के कारणसे हुसैनअली जब आप आसिफ़ज़ाह के सर करने के वास्ते दखन को जाने लगा तो उसे साथ लेता गया। लेकिन जब आगरे से कुछ आगे बढ़ा तो एक आदमीने, जो पहले से सिखलाया पढ़ाया हुआ था, हुसैन-अली का काम तमाम किया। मुहम्मद शाह ने दिल्ली में लौट आकर, अब्दुल्लाह को लड़ाई में शिकस्त दे क़ैद कर लिया। इसके बाद विज़ारत के लिये आसिफ़ज़ाह बुलाया गया। परन्तु आसिफ़ज़ाह ने दिल्लीमें आकर जब देखा कि बादशाह ऐय्याशी में डूबा हुआ है, और राजकाज से बिल्कुल ग़ाफ़िल है, तो विज़ारत से इस्तीफ़ा दे अपनी हुकूमत पर दखन को लौट गया। इसी ख़यालसे इस वक़्त मुहम्मद शाह का एक और वज़ीर सआदतख़ां भी विज़ारत छोड़ कर अवध में चला गया। दोनों वज़ीरों ने अपने ठिकाने पर जा एक एक स्वाधीन राज क़ायम किया। आसिफ़ज़ाहकी औलाद में निज़ाम के नामसे आज तक नव्वाबी चली आती है। सआदतख़ां की औलाद भी अवध में बराबर राज करती रही—आख़िरी नव्वाब वाजिदअली

शाह १८५६ ई०में अपनी सल्तनत से बेदख़ल हो कर कलकत्ते में रहते हैं।

आसिफ़जाह ने दिल्ली से लौट आकर राजधानी अपनी हैदराबाद में क़ाइम की। इस वक़्त यहां मरहटों की बड़ी चढ़ी बढ़ी थी। बालाजी विश्वनाथ नाम एक ब्राह्मण राजा साहू का "पेशवा" यानी प्रधान मन्त्री था। यह पेशवाईका ओहदा पुश्तैनी हुआ करता था। ख़ैर, पहले सय्यिद हुसैन के जिस सुलहनामे को फ़र्रुख़सियर ने नामंज़ूर कर दिया था, बालाजी ने उसे बड़ी चतुराई के साथ मुहम्मद शाह से मंज़ूर करा लिया। और इसी सुलहनामे के मुताबिक़ चौथ और चौथ बाद देकर राजकी आमदनी का दसवां हिस्सा तमाम तहसीलने लगे। १७२० ई० में बालाजी के परलोक सिधारने पर उस का बेटा बाजीराव पेशवाई के ओहदे पर मुक़र्रर हुआ। इसने तो दिल्ली के बादशाह ही पर चढ़ाव करने का मन्सूबा बांधा। और इसी इरादेसे वह मालवे में लूट मार करता हुआ गुजरात में जा चौथ तहसीलने लगा।

आसिफ़जाह ने ख़याल किया था कि थोड़े बहुत कुछ रुपये दे देने से चौथ और "सरदेशमुखी" (यानी राज की आमदनी का दसवां हिस्सा) से बरी कर दिये जायेंगे। परन्तु यह जब होने न पाया, तो क्या उज़्र पेश किया कि दूसरे शिवाजी के मरने बाद साहूका सौतेला भाई भी उस की जगह पर राज करता है— फिर यह चौथ वग़ैरह पर दोनों में से किस का हक़ है, पहले इसका तस्फ़ीया हो जाना चाहिये। इस बात के सुनते ही साहू और बाजीराव दोनों नीले पीले

हुए, और दोनों ने आसिफ़जाह के इलाके पर चढ़ाई की। आफ़िज़ाह ने शंभूजी से मिल कर इन्हें रोकना चाहा। परन्तु साहू ने इतना हैरान कर मारा कि आख़िर लाचार हो कर साहू से आसिफ़जाह को सुलह कर लेनी पड़ी।

मरहटों में पेशवा की तरह राजप्रतिनिधि का भी एक बड़ा ओहदा था। इसी प्रतिनिधि ने एक बार शंभूजी को घेर कर पूरी शिकस्त दी, और यह इकरार करा लिया कि साहू मरहटों की रियासतों में तमाम राज करेगा, और शंभूजी सिर्फ कोलापुर के आस पास ज़िलों का राजा रहेगा। साहू और शंभूजी में इस तौर पर सुलह हो जाने पर आसिफ़जाह ने बाजीराव के ज़ोर घटाने की दूसरी तदबीर सोची। मरहटों में पेशवा और प्रतिनिधि की तरह सेनापति का ओहदा भी मौरूसी हुआ करता था। इस समय सेनापति दबारी के ज़ोर से गुजरात मरहटों के दखल में आया। आसिफ़जाह ने क्या किया कि बाजीराव और दबारी दोनों को आपस में लड़ा दिया। आख़िरकार खुलमखुला लड़ाई की नौबत पहुंची। शिवाजी के बाद मरहटों में बाजीराव से बढ़ कर चालाक और तेज़ कोई पैदा न हुआ। लड़ाई में बाजीराव ने फ़तह पाई, और दबारी मारा गया। बाजीराव ने इस घड़ी नरमी से काम लिया, यानी सेनापति का ओहदा दबारी के दूध पीते बच्चे ही को दिया, और गुजरात के ख़ज़ाने की आधी तहसील लेने का हुक्म दिया (१७३१)। और पीलाजी गायकवाड़ को उसका नाइब मुक़र्रर कर गुजरात का इन्तिज़ाम उसके सुपुर्द किया।

बड़ोदे का राज आज तक इसीके घराने में है।

बाजीराव ने ऊदाजी पवार, मलहार राव होलकर, और राना जी सिन्धिया नाम तीन आदमियों को ऊंचे ऊंचे ओहदों पर मुक़र्रर किया था। ऊदाजी पवार को धारवाड़ का राज मिला। मलहरराव होलकर के घरानेवाले इन्दौर में, और रानाजी सिन्धिया के घरानेवाले गोवालियर में आज तक राज करते हैं। इन दोनों राजों को यथाक्रम होलकर और सिन्धिया का राज कहते हैं।

दबारी के मारे जाने पर बाजीराव और आसिफ़जाह में सुलह हो गई, और दोनों ने एक दूसरे की मदद देने का वादा किया।

१७३२ ई० में बुन्देलखंड के किसी राजा ने मालवा के सूबदार मुहम्मदख़ां से सताये जाने के बाइस बाजीराव की शरण ली थी। बाजीराव के मुहम्मदख़ां को उस के राज से निकाल बाहर करने पर उस ने बाजीराव की इस इहसान के बदले पहले तो सिर्फ़ झांसी का राज दिया, फिर मरते समय सारा बुन्देलखंड सौंप गया।

मुहम्मदख़ां के बाद जयपुर का राजा २रा जयसिंह मालवा का सूबदार मुक़र्रर किया गया। यह विज्ञान शास्त्र का बड़ा उत्साही था। इसी के वक़्त में बनारस का मानमन्दिर और वहां के उम्दे उम्दे ज्योतिष के यन्त्र बनवाये गये थे। विद्यामें जैसा यह निपुण था लड़ाई में वैसा न था। इस ने जब देखा कि मरहटों से लड़ कर फ़तह उठाना मुश्किल है तो मालवा बाजीराव के हवाले कर दिया। मरहटों की

ज़ोरावरी देख कर मुहम्मद शाह ने भी इस बात पर उज़्र न किया। परन्तु पेशवा को मालवा पाने पर भी सन्तोष न हुआ। मुहम्मद शाह को तंग करना शुरू किया। निदान मुहम्मद शाह ने सुलह का पैग़ाम भेजा। लेकिन बाजीराव ने ऐसी कड़ी कड़ी शर्तें रखनी चाहीं, कि मुहम्मद शाह राज़ी न हो सका। परन्तु रोज़ रोज़ उसका तो ज़ोर घटता जाता था और मरहटों का बढ़ता जाता था। मरहटों की इस तरक़्क़ी को देख आसिफ़जाह भी सख़्त घबराया हुआ था, पस मुहम्मद शाह के बुलाने पर दिल्ली को तुरत चला गया, और सेनापति मुक़र्रर हो कर मरहटों से लड़ने तो आया, परन्तु कुछ कर न सका। मरहटों ने उसकी फ़ौजों को तीन तेरह कर दिया। आख़िरकार १७३८ में वह पेशवा से सुलह कर लेने को मजबूर हुआ। शर्त सुलह की यह हुई—चम्बल नदी के दक्खिन सब ज़मीनें और बादशाही ख़ज़ाने से ५० लाख रुपये मरहटों को दिये जावें। इस सुलहनामे के मुवाफ़िक़ कामों के बर्ताव होने के पेश्तर ही नादिर शाह ने हिन्दुस्तान पर चढ़ाई की।

नादिर शाह कास्पियन समुद्र के किनारे रहने वाला एक चरवाहों की क़ौम का था। १७२२ में जब अफ़ग़ानों ने ईरान की सल्तनत तबाह कर डाली थी उस वक़्त ईरान के शाह का तहमास्प नाम एक लड़का दुश्मनों से जान बचा कर उन चरवाहों की पनाह में गया था। इसी वक़्त बहादुर नादिर ने कुछ आदमियों को इकट्ठा कर और ईरान में जा अफ़ग़ानों को मार भगाया। नादिर ने पहले तो तहमास्प ही को तख़्त पर बिठाया, फिर १७३६ ई० में उसी तख़्त

से उतार आप ईरान का बादशाह हुआ। इस के बाद उसने हिरात और कन्दहार दख़ल किया, और हिन्दुस्तान के बादशाह को पहले तो एक चिट्ठी लिखी, फिर, एक हर्कारे से अपने कई एक अफ़ग़ानी दुश्मनों की गिरफ़्तारी के वास्ते कहला भेजा। परन्तु जब चिट्ठी का जवाब नहीं गया, और हर्कारा मारा गया, तो नादिर के ग़ुस्से की हद न रही, हिन्दुस्तान की तरफ़ मुड़ा और दिल्ली से ५० कोस दूर कर्नाल में आ छावनी डाली। (१७३८)।

मुहम्मद शाह अब तक बेख़बर था। आसिफ़जाह और सआदतख़ां पर दग़ाबाज़ी का शक पैदा हुआ था। जब नादिर शाह के कर्नाल तक पहुंच जाने की ख़बर पहुंची, तो बड़ी घबराहट पड़ गई। आख़िरकार कर्नाल में लड़ाई हुई, परन्तु नादिर ने जय पाई। और मुहम्मद शाह ने सरदारों समेत अपने तईं नादिर के हवाले किया। नादिर मुहम्मद शाह के साथ दिल्ली के क़िले में दाख़िल हुआ। दूसरे ही दिन शहरवालों ने क्या हवाई उड़ाई कि नादिर शाह मर गया, और फिर बदमाशों ने ईरानियों को क़त्ल करना शुरू किया। नादिर शाह इस ख़बर को सुन कर नीला पीला हुआ, और आम क़त्ल और लूट मार करने का हुक्म सुनाया। सुबह से कुछ दिन चढ़े तक यह हुक्म क़ाइम रहा। फिर मुहम्मद शाह के कहने से क़त्ल की मौक़ूफ़ी का हुक्म हुआ। इस के कुछ दिनों के बाद नादिर शाह शाहजहान का तख़्त-ताऊस और ३० करोड़ के लगभग नक़द रुपये लेकर देस को लौट गया।

जाते वक़्त उसने मुहम्मद शाह को तख़्त पर फिर क़ाइम करके एक ओहदनामा लिखा लिया कि जिसकी रू से सिंध नदी के पश्चिम तमाम मुल्क ईरानकी सल्तनत के मातहत हुआ ।

नादिर शाह की चढ़ाई के बाद दिल्ली और दिल्ली के बादशाह ऐसी बुरी दशा को पहुंच गये थे कि अगर मरहटे ज़रा भी जी पर लाते तो सारा हिन्दुस्तान अपने अधीन कर लेते । परन्तु इस वक़्त इनके यहां घर ही में लड़ाई की आग ऐसी भड़की हुई थी, कि बाहर निकलने की कब फुर्सत मिलती थी ?—जिस तरह ऊपर बयान हुआ है उससे मालूम होता है कि बाजीराव पेशवा ने धीरे धीरे साहू के सब इख़्तियार अपने हाथ कर लिये थे । इसी कारण से वह बहुतेरों की आंखों में कांटा सा गड़ने लगा । पहले पहल परसुजी भोंसले ही ने, जो एक बड़े ओहदे पर मुक़र्रर था, और जिस के सुपुर्द बराड़ के चौथ वसूल करने का काम हुआ था, गुजरात के गायकवाड़ से मिल कर बाजीराव को उखाड़ना चाहा, परन्तु सफल न हो सका । इस के बाद १७४० ई० में बाजीराव की वफ़ात हुई । बाजीराव के तीन बेटे थे,—बड़े का नाम बालाजी पेशवा था । हरचंद यह बाप सा सिपाही और बहादुर न था, ताहम एक बारगी डरपोंक भी न था । परसुजी का उत्तराधिकारी रघुजी भोंसले वग़ैरह प्रधान आदमियों के रोक टोक करने पर भी वह सब बखेड़ों को दूर कर के अपने ओहदे पर जम के बैठ गया । इसके बाद उसने बादशाह को उस सुलहनामे के

मुताबिक़ चलने को मजबूर किया, जिसे आसिफ़जाह ने नादिर की चढ़ाई के पहले बादशाह की तरफ़से तामील किया था। इस समय रघुजी के एक सेनापती भास्कर पंडित ने पीछे खुद रघुजी ने भी जब बंगाले में उपद्रव* मचाने शुरू किये, तो बंगाले के नव्वाब अलीवर्दी ख़ां ने बादशाह से मदद मांग भेजी। बादशाह ने बालाजी को कहला भेजा कि "अगर तुम रघुजी को बंगाले में उपद्रव करने को मना कर दो तो तुम्हें बंगाले की आमदनी में से ११ लाख रुपये और मालवे की हुकूमत देंगे।" बालाजी बंगाले में जा रघुजी को निकाल बाहर कर उस वक़्त की राजधानी मुर्शिदाबाद के ख़ज़ाने से ११ लाख रुपये ले कर मालवा होता हुआ सितारे को चला गया।

कुछ दिनों के बाद रघुजी बालाजी की राय से चौथ वसूल करने को फिर बंगाले में गया। बूढ़ा अलीवर्दी बड़ी बहादुरी के साथ १० बरस तक बराबर मरहटों से लड़ा, आख़िरकार जब थक गया तो १७५१ में रघुजी से इस शर्त पर सुलह करके निश्चिन्त हो गया कि सालाना १२ लाख रुपये बतौर चौथ के और सूबे उड़ैसे का सारा राज पाने पर मरहटे बंगाले में फिर न आयेंगे।

इसी वक़्त साहू ने इन्तिक़ाल किया। इसे लड़का बाला कोई न था। इस राज पर कोलापुर के राजा का हक़ था, परन्तु उसने न पाया। २रे शिवाजी का बेटा राम, साहू के सिंहासन पर, बिठाया गया।

---

*इन ही उपद्रवों को "बरगी" के उपद्रव कहते हैं।

इधर ईरान के बादशाह नादिर शाह के मरने पर अहमद-अब्दाली नाम एक आदमी उसकी फ़ौज का सरदार अफ़ग़ा-निस्तान का स्वाधीन राजा हो गया था। मुहम्मद शाह को कमज़ोर पा कर उस से लड़ने के इरादे से अहमद अब्दाली चला आता था कि राह में सरहिन्द के पास उसकी फ़ौज ने बिगड़ कर उसे शिकस्त दे निकाल बाहर किया (१७४८)। मुहम्मद शाह इसी साल परलोक को सिधारा।

अहमद शाह।

१७४८—१७५४।

मुहम्मद शाह के मरने पर उसका बेटा अहमद शाह तख़्त पर बैठा। इसने सआदतख़ां के बेटे सफ़दर जंग को अपना वज़ीर मुक़र्रर किया। पहले ही से रोहिले नाम पठान क़ौम के बहुत से लोग दिल्ली की सल्तनत में काम करते करते बड़े ज़ोरावर हो गये थे। इस समय इन में से एक सरदार अली मुहम्मद सारे रोहिलखंड का राजा हो गया था। मुहम्मद शाह ने १७४५ ई० में इसे शिकस्त दे सूबे सरहिन्द की हाकिमी दी थी। परन्तु इस के बाद रोहिलों ने फिर रोहिलखंड ले लिया। अहमद शाह के वज़ीर सफ़दर जंग की रोहिलों से लाग पड़ गई थी। यह रोहिलों की जड़ मूल से उखाड़ने के वास्ते जी जान से उनके पीछे पड़ा। परन्तु जब कई एक लड़ाइयों में सफ़दर जंगने ताबड़-

तोड़ शिकस्तें खाईं, और ग़नीम ने लखनऊ घेर लिया तब तो सफ़दर जंग के चिहरे पर हवाइयां उड़ने लगीं, निदान मरहटी फ़ौजों के सरदार सिन्धिया और होलकर की शरण ली। बारे इनकी मदद से रोहिले सर हुए (१७५१)।

सफ़दर जंग जब रोहिलों के साथ लड़ाई में मशगूल था, उस वक़्त अफ़ग़ानों का सरदार अहमद अब्दाली फिर पंजाब पर चढ़ आया था, और बादशाह ने पंजाब उस के हवाले कर सुलह कर ली थी। सफ़दर जंग इस सुलहनामे से नाखुश हुआ, और विज़ारत से इस्तीफ़ा दे अवध की तरफ़ अपनी सूबदारी पर चला गया। इसी वक़्त से अवध स्वाधीन हुआ (१७५२)।

सफ़दर जंग के बाद आसिफ़शाह का पोता ग़ाज़ीउद्दीन वज़ीर हुआ। इसने १७५४ में अहमद शाह की आंखें निकलवा कर क़ैद कर लिया, और बादशाही घराने के एक दूसरे आदमी को तख़्त पर बिठाया।

२रा आलमगीर।

१७५४—१७५९।

इस नये बादशाह का नाम २रा आलमगीर रक्खा गया। इन दिनों दिल्ली सल्तनत की दशा परले सिरे की बुरी हो गई थी। गुजरात, बंगाला, बिहार, उड़ेसा, अवध, रोहिलखंड, पंजाब, हैदराबाद, महाराष्ट्र, और कर्नाटक, ये सब

सूबे इस समय दिल्ली से छूट छूट कर स्वाधीन हो हो गये थे। इस समय तक सिक्ख भी खूब बढ़ गये थे। जाटों ने अलग ही भरतपुर में राजधानी बना अपना राज क़ाइम कर लिया था। और इस समय जब ग़ाज़ीउद्दीन ने पंजाब ले लेने का इरादा किया तो दिल्ली सल्तनत की कमबख़्ती हद को पहुंच गई।

ग़ाज़ीउद्दीन की धोखा दे कर पंजाब दख़ल कर लेने से उस सूबे का असल मालिक अहमद अब्दाली नीला पीला हुआ, और फ़ौजों के साथ दिल्ली पर चढ़ आया। नादिर शाह सा दिल्लीवालों की जान और माल छीनता खसोटता एक शहज़ादी से शादी कर अपने देस को लौट गया (१७५७)। बादशाह के कहने से ग़ाज़ीउद्दीन को दबाने के लिये वह एक रुहैले को सेनापति मुक़र्रर करता गया। परन्तु ज्यों ही अहमद यहां से गया कि ग़ाज़ीउद्दीन ने मरहटों की मदद से उसे निकाल बाहर कर सारा इन्तिज़ाम सल्तनत का अपने हाथ कर के बादशाहत को अच्छी तरह अपने पंजे में कर लिया। उधर मरहटे पंजाब दख़ल कर के अपने देस को लौट गये।

इस के बाद मरहटों ने अवध पर चढ़ाई करने और दिल्ली की बादशाहत छीन लेने का मंसूबा किया। इन दिनों जैसे ये चढ़े बढ़े थे, उससे उनका ऐसा मंसूबा बांधना बिल्कुल ख़याली पुलाव पकाना ही नहीं मालूम होता था। परन्तु कई एक मुसलमान सूबदारों ने, मरहटों की इताअत क़बूल करने से बचने के लिये, अहमद शाह दुर्रानी (अहमद

अब्दाली) को फिर बुलाया। इसने आकर सिंधिया और होलकर की फौजों को शिकस्त दी। इस अर्से में गाज़ीउद्दीन ने आलमगीर को मार कर शाहजहान नाम जिस आदमी को बादशाही ताज पहनाया, उसे और किसी ने बादशाह नहीं माना।—पस आलमगीर का बेटा शाहआलम ही बादशाह हुआ (१७५९)।

---

२१ शाह आलम।

शाह आलम (अलीगुहर) मुग़ल घराने का आखिरी बादशाह हुआ। बाप के क़त्ल के समय यह बंगाले में था। इस के राज का पूरा हाल अंगरेज़ों की सल्तनत में अच्छी तरह बयान किया जायगा।

सिन्धिया और होलकर की फौजें हार जाने से मरहटों का जी छूटा नहीं, बल्कि उसी वक़्त से अहमद शाह दुर्रानी के मुक़ाबले के लिये पूरा सामान इकट्ठा करने में मशगूल हुए। बारे थोड़े ही दिनों के बाद बालाजी पेशवा के भतीजे सदाशिव राव भाऊ और पेशवा के बेटे विश्वनाथ १ लाख ४० हज़ार सिपाही साथ ले दिल्ली की तरफ़ रवाना हुए, और दिल्ली को दख़ल कर वहां के सब माल असबाब तसर्रुफ़ कर गये (१७६०)। अगर अहमद शाह से लड़ना न होता तो मरहटों की सलाह थी कि विश्वनाथ राव को इसी समय दिल्ली के तख़्त पर बिठाइये। अहमद शाह इस वक़्त अवध में नव्वाब शुजाउद्दौला से सलाह लेता था। उसने एक बार

इधर ही से मरहटों की फ़ौज पर हल्ला किया। मरहटों ने वहां से हट कर पानीपत में अपने मोर्चे क़ाइम किये, फिर यहीं अहमद शाह दुर्रानी से लड़ाई शुरू हुई। उस समय मरहटों के पास कुल ७० हज़ार सवार, १५ हज़ार पैदल सिपाही बच गये थे, और दो सौ तोपें थीं। अहमद शाह के पास भी ५३ हज़ार सवार, ३८ हज़ार पैदल सिपाही, और ३० तोपें मौजूद थीं। निदान सदाशिव राव के घमंड से मरहटों ने इस लड़ाई में (१७६१) शिकस्त खाई, और सदाशिव और विश्वनाथ के गिरफ़्तार हो कर मारे जाने से सारी फ़ौज इनकी तितिर बितिर हो गई। इस शिकस्त की ख़बर जब दक्खन पहुंची, तो सारे महाराष्ट्र देश में वावेला पड़ गया, इसी के ग़म में बालाजी की जान गई। लड़ाई के हारने से मरहटों ने सदा के लिये हिम्मत हार दी, और इसी समय से इनकी घटन्ती शुरू हुई।

अहमद शाह चाहता तो इस समय दिल्ली का बादशाह बन जाता, परन्तु न मालूम क्यों वह सीधा अपने वतन को लौट गया। शाहआलम इस समय बंगाले में अंगरेज़ों से लड़ने की फ़िक्र में था। परन्तु सच पूछो तो इस समय हिन्दुस्तान के असल बादशाह अंगरेज़ ही थे। पस अब लौर्ड लिटन की सल्तनत तक अंगरेज़ों ही के बारे में लिखा जायगा।

सातवां अध्याय।

युरोपियनों का हिन्दुस्तान में आना।

हिन्दुस्तान बहुत पुराने समय से धन और सभ्यता के लिये प्रसिद्ध है। नामी हिरोडोटस के लिखे यूनानियों के पुराने इतिहासों में भी हिन्दुस्तान का ज़िक्र पाया जाता है। यह बात अभी तक दरयाफ़्त नहीं हुई है कि मसोडन के बादशाह सिकन्दर के पहले कोई युरोपियन हिन्दुस्तान में आया या नहीं। सिकन्दर के यहां से लौट जाने के बहुत दिनों के बाद युरोपियन लोग धीरे धीरे तिजारत के वास्ते यहां आया करते थे, परन्तु इस के पहले भी मिस्र, अरब, और फिनिशिया वग़ैरह देशों के सौदागर इस देश में सौदागरी करने आते थे। युरोपियनों में सब से पहले मालूम होता है कि शायद रोम ही वाले सौदागरी के वास्ते यहां आये।

सन १४९८ ई० में वास्कोडीगामा नाम एक पुर्तगीज़ तीन जहाज़ों के साथ उत्तमाशा अन्तरीप से घूम कर इस देश में आया था, मलबार के किनारे कलीकोट शहर में

उतरा था। उस समय दिल्ली का बादशाह सिकन्दर लोदी था और कल्लीकोट में राजा ज़मोरिन राज करता था। ज़मोरिन पहले तो पुर्तगीज़ों से बड़े आवभाव के साथ पेश आया, परन्तु अरब और मिस्र वाले सौदागरों ने, जो मूर कहलाते थे, बहका कर राजा का दिल पुर्तगीज़ों की तरफ़ से फेर दिया। निदान दोनों में लड़ाई होने की नौबत पहुंची। इसके बाद जब पुर्तगाल से लोग धीरे धीरे हज़ारों यहां आ गये, और जब पुर्तगीज़ों का पाया हिन्दुस्तान में अच्छी तरह जम गया, तो देसी राजाओं और दूसरे दूसरे लोगों की अमलदारियों पर भी ये हाथ फैलाने लगे। फिर इन्हीं ने कई एक जगहें तिजारत की कोठियां खोलीं। गोवा को सदर मक़ाम मुक़र्रर किया। इस के अलावह बंगाले के दरमयान हुगली में एक, और अराकान में दो कोठियां, खोलीं। और ईरान में अर्मज़, और सिंहल आदि देशों में और हिन्दमहासागर के प्रायः सब टापुओं में तमाम सौदागरी ऐसी फैलाई कि हिन्दमहासागर में चक्रवर्ती राज करने लगे। १६वीं सदीके अन्त तक ही इनका यह निकंटक राज बना रहा, परन्तु फिर वलन्देज़, दिनामार, अंगरेज़, और फ़रासीसियों के आने से पुर्तगीज़ लोग बहुत दब गये।

पुर्तगीज़ों की चढ़ी बढ़ी सौदागरी के हाल सुन कर वलन्देज़ों से न रहा गया। ये भी १५९५ ई० में जहाज़ ले कर हिन्दमहासागर में आये, और जावा, सुमात्रा वग़ैरह टापुओं से सौदागरी करने लगे। थोड़े ही दिनों के अर्से में

इन्हों ने पुर्तगीज़ों के भी कान काटे। उन को लड़ाइयों में हरा हरा कर उन की कई एक कोठियां छीन छीन लीं। एक कोठी इन्हीं ने चुंचुड़ा शहर में, जो बंगाले में है, खोली, जिसकी १७वीं सदी के अन्त में क़िलेबंदी भी कर ली। १८२४ ई० तक चुंचुड़ा वलन्देज़ों ही के दख़ल में था, कि जब अंगरेज़ों ने सुमात्रा टापू के एक शहर को दे कर चुंचुड़ा बदल लिया।

१७वीं सदी के शुरू में दिनामारों ने भी हिन्दुस्तान में आ कर दखन के दरमयान ट्रांकुइबार में और बंगाले के दरमयान श्रीरामपुर में एक एक कोठी खोली थी। तब से श्रीरामपुर बराबर इन ही के हाथ में रहा। १८१२ में इसे अंगरेज़ों ने ख़रीद लिया।

सन १६०० में इंगलिस्तान के कई एक सौदागरों ने चाहा कि साझा करके कुछ रुपये जमा कीजिये, और महारानी एलिज़ाबथ से सनद ले हिन्दुस्तान की सौदागरी कीजिये। बारे इन्हों ने वैसा ही किया, और अपनी मंडली का नाम "ईस्ट इन्डिया कम्पनी" रक्खा। यह अधिकार पहले पहल तो इन को कुल पन्द्रह ही बरसों के लिये दिया गया था, पीछे जब जब चाहा मुद्दत बढ़वा बढ़वा ली। इस कम्पनी ने अपने कारोबार के प्रबन्ध के लिये एक सभा नियत की जिस का नाम "कोर्ट ऑफ़ डिरेक्टर्स" रक्खा था। इस सभा में २ मेम्बर और १ सभापति नियत किये गये। सन १६०१ में कप्तान लैंकैस्टर ने कम्पनी के ५ जहाज़ साथ ले सुमात्रा टापू में उतर कर एक कोठी खोली। इस के बाद धीरे धीरे कम्पनी के और जहाज़ों के आने से सुमात्रा

और आसपास के टापुओं में कम्पनी की सौदागरी जल्द ही जम गई। पुर्तगीज़ इससे अपना हर्ज समझ के अंगरेज़ों से लड़ बैठे, परन्तु शिकस्त खा गये।

इसके बाद अंगरेज़ों ने धीरे धीरे पिपली, मछलीबन्दर, सूरत, कल्लीकोट, हुगली, क़ासिमबाज़ार, पटना वग़ैरह कई एक शहरों में अपनी कोठियां खोल दीं। इसी सूरत की कोठी के डौक्टर बाउटन ने १६३८ ई० में शाहजहान की किसी बीमार बेटी का इलाज किया, और कृपा भगवान की, कि वह चंगी हो गई। बादशाह बहुत खुश हुआ, और डौक्टर ने कम्पनी के वास्ते हिन्दुस्तान में सौदागरी करने के लिये जो जो अधिकार मांगे, बादशाह ने सब कबूल कर लिया। इसी इलाज के सबब से बंगाले के नव्वाब शाह शुजा के ज़रीये से भी कम्पनी को सौदागरी के बहुतेरे सुबीते हुए।

सन १६४० में विजयनगर के राजा ने अंगरेज़ों को बुला कर अपने राज में क़िलेबन्दी करके एक कोठी खोलने का हुक्म दिया। इस क़िले का नाम "सेन्ट जौर्ज" रक्खा गया। यही मंदराज शहर की नेव पड़ी। १६५३ में यह शहर एक प्रेसिडेन्सी यानी करमंडल कनारे की सौदागरी के लिये प्रधान जगह मुक़र्रर की गई।

सन १६६२ में इंगलैन्ड के बादशाह २रे. चार्लस ने पुर्तगाल के राजाकी बेटीसे ब्याह कर बम्बई शहर दहेज़ में पाया। उसने १६६८ में इसे कम्पनी को दे डाला। कम्पनी ने इस शहर को पच्छिम किनारे की

सौदागरी के वास्ते प्रधान जगह (प्रेसिडेन्सी) बनाया।

सन १६८६ में अंगरेज़ों ने बादशाह औरंगज़ेब के बेटे आज़म से कलकत्ता, सूतानुटी, और गोविन्दपुर तीन गांव ख़रीदे, और वहां एक कोठी खोली। सन १६९८ में यह कोठी फ़ोर्ट वीलियम नाम किले की क़ैद में कर ली गई। १७१५ में यह शहर भी एक अलग प्रेसिडेन्सी क़ाइम किया गया।

इसी तरह ईस्ट इन्डिया कम्पनी की तिजारत हिन्दुस्तान में कई एक जगह होने लगी। फिर इंगलैन्ड के राजा २ रे चार्लस ने सौदागरों की एक और मंडली को उसी तरह हिन्दुस्ताने में तिजारत करने की सनद दी। इन दोनों कम्पनियों के आपस में अक्सर छेड़छाड़ और लड़ाई झगड़े भी हुआ करते थे। इससे दोनों की हर्ज पहुंचने लगा। निदान सन १८०८ में दोनों कम्पनियां मिल गईं, और "यूनाईटेड ईस्ट इन्डिया कम्पनी" के नाम से प्रसिद्ध हुईं। यह मिली कम्पनी बंगाले के नव्वाब के साथ कभी मिल मिल कर और कभी बिगड़ कर, बहुत दिनों तक इस देश में सौदागरी किया की। मरहटों के उपद्रवों से बचने के लिये सन १७४२ में कलकत्ते की चारों तरफ़ "मरहटी खाई" नाम एक खाई तय्यार कराई गई। इस समय कलकत्ता, मंदराज, और बम्बई में एक एक अदालत क़ाइम हुई, थोड़ी बहुत फ़ौज रखने का प्रवन्ध किया गया। इन ही फ़ौजों से अंगरेज़ों को दुश्मनों से अक्सर लड़ने भिड़ने का भी काम पड़ता था। फ़रासीसियों से और

इन से जो लड़ाई हुई थी, उसका हाल आगे लिखा जाता है।

फरासीसी सन १६०४ ई० में यहां सौदागरी करने आये। और मुरिश बोर्बों वगैरह टापुओं में बहुत दिनों तक सौदागरी करने के बाद सूरत शहर में एक कोठी खोली (१६६४)। इस के बाद सन १६७४ में पटुचेरी और सन १६८८ में चन्दननगर उन की सौदारी की प्रधान जगहें हुईं। इन के सिवा माही, कारीकाल वगैरह और भी कई एक जगहों में उन की कोठियां खोली गईं थीं। मगर इन सब में पटुचेरीवाली कोठी सब से बढ़ी चढ़ी थी।

कर्नाटक की लड़ाई।

सन १७४४ में युरोप में अंगरेज़ और फरासीसियों में लड़ाई शुरू होने पर हिन्दुस्तान में भी इन दोनों क़ौमों ने आपस में लड़ना शुरू किया। लड़ाई के शुरू में मुरिश और बोर्बों टापुओं का हाकिम लावेर्डोने ने अंगरेज़ों के मंदराज शहर को घेर कर ले लिया, और पटुचेरी के हाकिम डुप्ले ने अंगरेज़ों को बहुत दबाना शुरू किया। अंगरेज़ों ने भी चाहा कि पटुचेरी दखल कर लेवें, परन्तु सफल न हुए। इस के बाद सन १७४८ में, जब युरोप में इन दोनों क़ौमों में सुलह हो गई, तब यहां के भी लड़ाई झगड़े तय पा गये।

उसी साल निज़ाम घराने का आदि पुरुष दखन का निज़ामुल-मुल्क (आसिफजाह) के मरने पर तख़्त के वास्ते उस के बेटे नाज़िरजंग और नाती मुज़फ़्फ़रजंग के आपस में तकरार शुरू हुई। और ठीक उसी समय दखन के दरमयान कर्नाटक की नव्वाबी के वास्ते उस समय के वर्तमान नव्वाब अनवरुद्दीन और अगले नव्वाब के दामाद चन्दासाहिब के भी आपस में लड़ाई शुरू हुई। फ़रासीसियों ने हिन्दुस्तान में अपना अधिकार बढ़ाने के इरादे से इस मौके पर मुज़फ़रजंग और चंदासाहिब की मदद के वास्ते कुछ फ़ौज के साथ बूसी नाम सेनापति को भेजा। बूसी की मदद से जितनी लड़ाइयां हुईं, सब में नाज़िरजंग ने जय पाई, और उस का दुश्मन मुज़फ़रजंग क़ैद हो गया, और कर्नाटक का नव्वाब अनवरुद्दीन मारा गया। परन्तु नाज़िरजंग लड़ाई जीतने पर भी राज का सुख भोगने न पाया। थोड़े ही दिनों के बाद किसी नव्वाब के हाथ से उसके मारे जाने पर फ़रासीसियों ने मुज़फ़रजंग की क़ैद से छुड़ा ला कर निज़ाम के तख़्त पर बिठाया। परन्तु जब कुछ दिनों के बाद मुज़फ़रजंग भी अपनी फ़ौज के हाथ मारा गया, तब फ़रासीसियों ने नाज़िरजंग के भाई सलाबतजंग को तख़्त दिया। इस से इस सल्तनत का बखेड़ा तो निबट गया।

इधर कर्नाटक के नव्वाब अनवरुद्दीन के मारे जाने पर चंदासाहिब ने कर्नाटक की राजधानी को दखल कर लिया। अनवरुद्दीन के बेटे मुहम्मदअलीने अपने बालबच्चे समेत तिरुचिनापली के क़िले में पनाह ली। इस समय तक

अंगरेज़ इन लड़ाइयों से बिलकुल अलग थ, परन्तु जब इन्हीं ने देखा कि फ़रासीसियों ने इस लड़ाई में पड़ कर वहुत कुछ देश अधिकार, और इज़्ज़त हासिल की, तो फिर यह कब संभव था कि ये चुपचाप बैठे रहें? इन्हीं ने मुहम्मद अली की सहायता के लिये तिरुचिनापली में कुछ फ़ौज भेज दी। चंदासाहिब इस समय फ़रासीसियों की सहायता से तिरुचिनापली को घेरे हुए था। यह शहर चन्दासाहिब के हाथ में आ जाता, अगर अंगरेज़ी फ़ौज का क्लाइव नाम एक बहादुर सिपाही इसे न बचाता।

क्लाइव १८ बरस की उमर में कम्पनी की तरफ़ से मन्द-राज में केरानी के काम पर नियत हो के आया था। यह काम इसके मन के लाइक़ न होने के कारण इसने दो दो बार अपने तईं मार डालना चाहा था, अन्त में केरानी के काम से इस्तीफ़ा दे कर फ़ौज में भरती हुआ। इसी क्लाइव ने इस समय क्या किया कि थोड़ी सी फ़ौज ले जा कर चंदासाहिब की राजधानी अर्काट को घेर के दखल कर लिया। पस चंदासाहिब तिरुचिनापली की घेरी हुई फ़ौज का कुछ हिस्सा अपनी राजधानी का शत्रु के हाथ से उद्धार करने के लिये भेज दिया। परन्तु क्लाइव ऐसी बहादुरी के साथ शहर पर क़ब्ज़ा किये रहा, कि चंदासाहिब की फ़ौज से कुछ भी न बन आई, सब के सब नाकाम लौट गये। इस समय मेजर लौरेन्स ने, जो तुरत ही इंगलैन्ड से लौट आया था, क्लाइव को कुमक पहुंचाई, और मुहम्मदअली की सहायता के लिये मैसूर वग़ैरह जगहों से इकट्ठा करके बहुत सी फ़ौजें

भेजीं। निदान अंगरेज़ों ने तिरुचिनापली की घेरनेवाली फ़ौज के तई पूरी शिकस्त दी। फ़रासीसियों ने जब देखा कि जय की कोई आशा बाक़ी न रही, झट अंगरेज़ों से सुलह कर ली। चंदासाहिब क़त्ल कराया गया। मुहम्मदअली को अर्काट की नव्वाबी दी गई। और अंगरेज़ों को सौदागरी के लिये बहुत से अधिकार दिये गये। १७५२।

इस लड़ाई से फ़रासीसी दब तो गये थे, परन्तु झगड़ा एक बारगी मिटने न पाया। सन् १७५७ में जब फिर युरोप में दोनों क़ौमों में लड़ाई ठनी तो फिर यहां भी लड़ाई शुरू हुई। इस समय फ़रासीसियों की तरफ़ तो लाली और बूसी और अंगरेज़ों की तरफ़ आयरकूट सेनापती था। इस बार लड़ाई में पहले तो फ़रासीसियों ने जय पाई, परन्तु पीछे शिकस्त खाई, और उनकी प्रधान जगह पटुचेरी अंगरेज़ों के हाथ में आ गई। फिर १७६३ में दोनों क़ौमों में सुलह हो जाने पर फ़रासीसियों को पटुचेरी लौटा दिया गया, पर फिर इस के बाद उनका हिन्दुस्तान में कभी पाया जमने न पाया।

आठवां अध्याय।

बंगाले में दखल।

नव्वाब अलीवर्दी खां के बाद उसका नाती सिराजुद्दौला १८ बरस का १७५६ ई० में बंगाला, बिहार, और उड़ीसे का नव्वाब हुआ। इस समय दिल्ली के बादशाह का ज़ोर इतना घट गया था कि नव्वाब सिराजुद्दौला को उससे सनद लेने की ज़रूरत न हुई। जो हो, चंचल और निठुर सिराजुद्दौला नाना के बहुत लाड से ऐसे बुरे सुभावका ज़ालिम और बुरी बातों में आसक्त हो गया था कि उसके उपद्रवों से आदमियों की जान माल और औरतोंका सतीत्व बचाना कठिन हो गया था। यह पहले ही से अंगरेज़ों की उन्नति देख देख के जलता था, अब उन्हें जड़ मूल से उखाड़ने के लिये उनके पीछे पड़ा। इस समय कृष्णदास नाम एक अमीर हिन्दूने इसके अत्याचारों से तंग आ कर कलकत्ते में जा अंगरेज़ों की शरण ली। नव्वाब ने उसे भेज देने को अंगरेज़ों के पास लिखा। परन्तु अंगरेज़ों ने यह उचित न समझा कि जिसने आ कर अपनी शरण ली, उसे दुश्मन के हवाले करें। इन दिनों अंगरेज़ों को फ़रासीसियों से लड़ाई होने का बड़ा ही खटका था। इसी सबब से ये कलकत्ते में अपने क़िले की मरम्मत करने लगे

यह ख़बर जब सिराजुद्दौला को पहुंची, तो उस ने क़िले की मरम्मत मौक़ूफ़ रखने को लिख भेजा, पर अंगरेज़ों ने न सुना। इन ही दो क़ारणों से नव्वाब ने अंगरेज़ों से लड़ने की तय्यारी की, और क़ासिमबाज़ार की कोठियां लूट कर के फ़ौज के साथ कलकत्ते में पहुंच कर उन पर चढ़ाई की। इस समय कलकत्ते में अंगरेज़ों के पास बहुत ही थोड़े सिपाही थे। नव्वाब ने उन्हें शिकस्त दे क़िला ख़ाली करा लेने बाद ख़ज़ाना लूट लिया। जिस दिन क़िला फ़तह हुआ था, उस दिन नव्वाब के नौकरों ने क्या किया कि १४६ अंगरेज़ क़ैदियों को एक छोटी सी अंधेरी कोठरी में बन्द कर दिया। उस कोठरी में उस रात को हवा के न आने से और गरमी और प्यास की शिद्दत से उन क़ैदियों में से कुल २३ बचे, बाक़ी सब मर गये। सन १७५६ की १०वीं जून को यह माजरा हुआ था। यह माजरा हिन्दुस्तान में "काले बिल का क़त्ल" नाम से प्रसिद्ध है।

कलकत्ते की यह ख़बर जब मंदराज पहुंची, तो क्लाइव और वाट्सन साहब देसी और विलायती दोनों मिल कर १ हज़ार के लगभग सिपाही लेकर कलकत्ते को रवाना हुए। कलकत्ते पर फिर अपना क़ब्ज़ा किया। नव्वाब ने यह ख़बर सुन के फिर कलकत्ते पर चढ़ाई की। मगर इस बार क्लाइव से हार मान सुलह करके लौट आया। इस के बाद अंगरेज़ों के निकालने के लिये नव्वाब ने छुपे छुपे फ़रासीसियों से साज़िश की, परन्तु क्लाइव ने सुराग़

लगा कर तुरत फ़रासडांगा (चन्दननगर) पर चढ़ाई की, और फ़रासीसियों को पूरी शिकस्त दी। नव्वाब के चित्त की चंचलता देख क्लाइव ने बिचारा कि जब तक इस लड़के के हाथ राज रहेगा, अंगरेज़ लोग चैन से बैठने न पायेंगे।

ज़ालिम नव्वाब को सिंहासन पर से उतारने के लिये, सेनापति मीरजाफ़र, वज़ीर रायदुर्लभ, ख़ज़ांची जगतसेठ वग़ैरह राज के प्रधान प्रधान आदमियों ने साज़िश की और क्लाइव को बुलाया और क्लाइव ने भी बड़ी ख़ुशी से उनका साथ दिया और एक इक़रारनामा तय्यार किया। इस इक़रारनामे में यह लिखा गया कि मीरजाफ़र की मदद से अगर नव्वाब सिंहासन पर से उतार दिया गया तो वही नव्वाब बनाये जायेंगे, और अंगरेज़ लोग लड़ाई की नुक़सानी पुराने के लिये उन से बहुत धन और कलकत्ते के आस पास की बहुत सी ज़मीन पायेंगे। इन बातों के तय हो लेने पर अमीचंद नाम एक आदमी क्या बोल उठा कि, "हमें अगर तीस लाख रुपये न मिलेंगे तो मैं भंडा फोड़ दूंगा।" उस समय चतुर क्लाइव ने अमीचन्द को जाल इक़रारनामा दिखला के ठंडा किया।

सब बातें जब तय हो गईं, तब क्लाइव ने क़रीब ३ हज़ार सिपाहियों के साथ मुर्शिदाबाद की तरफ़ कूच किया। नव्वाब भी क़रीब ५० हज़ार फ़ौज की भीड़ भाड़ ले कर मुर्शिदाबाद से चला और १२ कोस दक्खिन पलासी के मैदान में क्लाइव की फ़ौज के आमने सामने अपनी छावनी डाली। दूसरे दिन भूर के तड़के लड़ाई शुरू हुई,

और बहुत देर तक ठहरी। दो पहर ढले दग़ाबाज़ मीर जाफ़र की सलाह से नव्वाब ने लड़ती फ़ौज को ज्यों हो लड़ाई मौकूफ़ करने का हुक्म सुनाया कि फ़ौज तीन तेरह हो गई, और क्लाइव ने पूरी जय पाई। सिराजुद्दौला ने जब कोई उपाय न देखा, बेचारा लाचार ऊंट पर सवार हो अपनी जान ले भागा। ये बातें सन १७५७ ई० की तारीख़ २३वीं जून को हुईं। कह सकते हैं कि इसी तारीख़ से हिन्दुस्तान की राज-लक्ष्मी मुसल्मानों के घर से निकल कर अंगरेज़ों के घर सिधारी। इसके बाद क्लाइव फ़तह के निशान उड़ाता मुर्शिदाबाद गया, और मीरजाफ़र को तख़्त पर बिठाया, और क़रार के मुताबिक़ पहले ही खेप में बहुत से रुपये ले कर कलकत्ते भेजे। उधर सिराजुद्दौला भाग कर बहुत दिनों तक ज़िन्दा रहने न पाया, भगवानगोले में पकड़ा गया, और मीर जाफ़र के बेटे मीरन के हाथ मुर्शिदाबाद में मारा गया।

मीर जाफ़र—क्लाइव।

इसके बाद ही लन्डन की डिरेक्टर सभाने ख़ुश हो कर क्लाइव को कलकत्ते की गवर्नरी दी। सन १७५८ में जब मीर जाफ़र ने सुना कि शहज़ादा अलीगुहर (शाहआलम) उस से लड़ने को चढ़ आया है, और पटना घेरे हुए है, तो डरा, और क्लाइव की शरण ली। क्लाइव ने झट फ़ौज भेज कर शहज़ादे की फ़ौजों को मार भगाया। इस कामके

बदले में मीरजाफ़र ने क्लाइव को एक ऐसी जागीर दी, कि जिसकी सालाना आमदनी ३० लाख रुपयों के लगभग थी। दखन में उत्तर-सरकार का इलाका फ़रासीसियों के दखल में था। इन्हें वहां से निकालने के लिये अगले साल यानी सन १७५८ में कर्नल फ़ोर्ड भेजा गया था, जो एक तरह से सफल हो आया था। इन बातों के देखने सुनने से लोगों ने समझ लिया कि जो कुछ है सो क्लाइव है,—मीर जाफ़र नाम का नव्वाब है। नव्वाब आप भी क्लाइव का इतना अधिकार देख कर जलने लगा। पस इस के ज़ोर तोड़ने के इरादे से चुंचुड़े के वलंदेज़ों से ख़त किताबत शुरू की। क्लाइव ने भी झट फ़ौज के साथ कर्नल फ़ोर्ड को चुंचुड़े भेज दिया। वलंदेज़ों ने शिकस्त खाई, और अंगरेज़ों ने जैसा कहा वैसाही करना पड़ा। इन कामों को तय करके सन १७६० में क्लाइव अपने देश को लौट गया।

क्लाइव की जगह पर वान्सिटार्ट नियत किया गया। यह क्लाइव सा न चतुर था और न चालाक था। इस समय शाहआलम ने फिर पटने पर चढ़ाई की थी। परन्तु मीरन और कौलियड ने आ कर उसे शिकस्त दे निकाल दिया। यहीं मीरन खेमे में बिजली के गिर-ने से मर गया। पहले ही से मीरजाफ़र अंगरेज़ों का क़र्ज़दार था। यहक़र्ज़ रोज़ रोज़ बढ़ता ही जाता था। अब अमीर के मरने पर राजकाज की बदइन्तिज़ामी से यह क़र्ज़ इतना बढ़ गया कि जिस का अदा होना असंभव मालूम होने लगा। अंगरेज़ों में धन का लालच इधर बहुत बढ़ गया था। पस

अब अंगरेज़ों को सन्तुष्ठ रखना नव्वाब के अधिकार के बाहर हो गया। इसी लिये अंगरेज़ों ने कई एक बहानों से मीर जाफ़र को सिंहासन से उतार दिया, और उसके दामाद मीर क़ासिम को नव्वाब बनाया।

मीर क़ासिम ने इस भलाई के बदले में कम्पनी को इनआम के तौर पर बर्दवान, मेदनीपुर, और चटगांव तीन ज़िले दे डाले, और सब क़र्ज़ अदा कर देने का वादा किया, और कम्पनी के नौकरों की भी खूब पूजा की १७६०।

मीर क़ासिम बुद्धिमान, चतुर, चालाक, और उत्साही था। उसने तुरत ही राज के खर्च घटा और आमदनी का सिलसिला बांध अंगरेज़ों के सब देन अदा कर दिये। परन्तु अंगरेज़ों की बिलकुल अधीनता उसे पसन्द न थी। इस अधीनता से छुटकारा पाने के इरादे से उस ने अपनी राजधानी मुंगेर में क़ाइम की। और वहीं फ़ौजों की शिक्षा और लड़ाई के उम्दे उम्दे असबाब तय्यार कराने शुरू किये। दिल्ली में कुछ बखेड़ा रहने के सबब से बादशाह शाह आलम अभी तक दिल्ली नहीं गया था—बिहार ही में इधर उधर फिर रहा था। मीर क़ासिम ने इस समय पटने में उसके पास जा २४ लाख रुपये सालाना मालगुज़ारी देना मंजूर कर बादशाह से बंगाला बिहार और उड़ैसे की सूबदारी के लिये एक सनद ले ली।

इसके बाद कलकत्ता काउन्सिल और नव्वाब से तकरार शुरू हुई—कारण यह हुआ कि तिजारती माल पर इस देस

के सब ही लोगों को महसूल देना पड़ता था—सिर्फ़ कम्पनी को बादशाही सनद के अनुसार महसूल नहीं लगता था। उन दिनों कम्पनी के नौकर भी तिजारत करते थे। इस समय वे भी अपनी अपनी कश्तियों पर कम्पनी की झंडी लगा बे महसूल दिये अपने अपने माल निकाल ले जाने लगे। नव्वाब के नौकरों को जब इस बात की ख़बर मिली तो रोक टोक की—परन्तु अंगरेज़ सुनेंगे क्या, और भी उलटा उन ही को हर तरह से ज़लील करने लगे। इस से देसियों का बेवपार बिल्कुल मिट्टी में मिल गया। नव्वाब ने बहुतेरा चाहा कि कुछ बन्दोबस्त हो, परन्तु जब किसी तरह से सफल न हुआ, ग़ुस्से में आकर क्या किया कि तिजारती माल का महसूल लेना एक क़लम मौक़ूफ़ कर हुक्म दे दिया कि 'अब किसी के माल पर कुछ महसूल नहीं लिया जायगा'। इस हुक्म से ख़ुद नव्वाब की, कम्पनी की, और कम्पनी के नौकरों की तो नुक़सानी हुई, परन्तु देशियों का बड़ा ही उपकार हुआ। इस बात के लिये कलकत्ते की काउन्सिल में एक बड़ी बहस पेश हुई, और इसी पर इसके मेम्बरों में से बहुतेरे नव्वाब से बिगड़ बैठे।

सब के पहले पटने की कोठी का गुमाश्ता एलिस साहिब नव्वाब से बिगड़ा, परन्तु शिकस्त खा कर साथियों समेत क़ैद हो गया। इस पर कलकत्ते के काउन्सिलवालों ने मीर क़ासिम की माज़ूली का इश्तिहार दे बूढ़े मीरजाफ़र को फिर नव्वाबी के ओहदे पर बहाल किया। इसके बाद ही लड़ाई शुरू हुई। मूती के पास गढ़िया में मीर क़ासिम

और अंगरेज़ों में एक लड़ाई हुई। इस लड़ाई में मीर क़ासिम की फ़ौज लड़ी तो खूब, परन्तु अन्त को शिकस्त खा गई (१७६३)। इसके बाद जब मुंगेर अंगरेज़ों के हाथ आ गया, तो मीर क़ासिम पटने की तरफ़ भागा और वहां पहुंच कर उसने बड़े निठुरपन के साथ, पटने के पहले हाकिम राजा रामनारायण को, ढाके के पहले हाकिम राजवल्लभ और उसके बेटों को, जगतसेठ के घराने के कई एक लोगों को, और एलिस और उसके साथियों को मरवा डाला। फिर पटना जब अंगरेज़ोंके अधिकारमें आया तो मीर क़ासिम वहां से भागा भागा अवध के नव्वाब की शरण में गया। वहां वह बादशाह शाहआलम से मिला। तीनों मिलकर पटने की तरफ़ चले आते थे, कि रास्ते हो में अंगरेज़ों से शिकस्त खा कर तीन तेरह हो गये। इस समय मेजर मनरो के सिपाही बिगड़ गये थे, परन्तु तुरत ही सर हो गये। इसके बाद फिर सन १७६४ में अवध के नव्वाब शुजाउद्दौला से बक्सर में लड़ाई हुई। इस में भी अंगरेज़ों ही ने जय पाई, और नव्वाब के बहुत से असबाब छीन लिये। इस लड़ाई के बाद बादशाह शाहआलम ने अंगरेज़ों की छावनी में हाज़िर हो कर अपने सिंहासन पाने के लिये सहायता चाही। इसके बाद अवध के नव्वाब ने फिर एक बार लड़ाई में शिकस्त खा कर अंगरेज़ों की शरण ली। अब तो जिधर देखो उधर ही अंगरेज़ों की जय पताका उड़ रही है।

क्लाइव के पीछे कलकत्ते के काउन्सिल की बुरी दशा हो गई थी। मेम्बरों ने स्वार्थपरता और अत्याचार की सीमा

की शर्तें ये थीं—एक दूसरे की जो जो जगहें, और किले जिसने लिये हैं, दोनों एक दूसरे को लौटा दें। और समय पड़ने पर आपस में फ़ौज से एक दूसरे की सहायता करें (१७६८)।

बाजीराव के मरने पर उसका बेटा मधुराव मरहटों का पेशवा हुआ। इसी के समय में मलहारराव होलकर की अहल्याबाई नाम विधवा बहू ने तमाम अपनी कीर्ति फैलाई थी। अंगरेज़ों से सुलह हो जाने पर हैदर और मरहटों में तकरार शुरू हुई—उस पर मधुराव पेशवा ने अनगिनत सेना के साथ मैसूर में जा राज्य को चौपट कर, हैदर को तीन तेरह कर दिया। हैदर ने भाग कर श्रीरंगपट्टन में शरण ली, और सुलहनामे के अनुसार सहायता के लिये अंगरेज़ों को बार बार बुलाया—परन्तु अंगरेज़ न आये पै न आये। निदान उसने बड़ा अपमान और नुक़सान सह कर मरहटों से सुलह कर ली। परन्तु अंगरेज़ों की इस दग़ाबाज़ी को उसने याद रक्खा।

नवां अध्याय।

वारन हेस्टिंग्स।

१७७२—१७८५

कार्टियर साहिब के बाद वारन हेस्टिंग्स १७७२ में बंगाले का गवर्नर हुआ। यह भी क्लाइव सा पहले पहल केरानी के काम के लिये मुक़र्रर हो कर इस देश में आया था। फिर ज्यों ज्यों उसकी विद्या बुद्धि और बल प्रगट होने लगा त्यों त्यों तरक़्क़ी होती चली। पहले मुर्शिदाबाद का रेसीडेन्ट फिर कलकत्ता काउन्सिल का मेम्बर मुक़र्रर हुआ। कई एक बरस पहले से बंगाले का ख़िराज तहसीलना, इन्साफ़ करना, सज़ा देना वग़ैरह सब काम मुर्शिदाबाद का रहने वाला मुहम्मद रज़ाख़ां नाम एक मुसल्मान के सुपुर्द था। उस समय नव्वाब बिल्कुल बच्चा था, इससे उसकी ख़बरगीरी के वास्ते मीरजाफ़र की एक स्त्री मनीबेगम मुक़र्रर थी, और राजा नन्दकुमार का बेटा गुरूदास इस नव्वाब के दीवान का काम अंजाम देता था। ये लोग अक्सर राजकाज में भी दस्तन्दाज़ी किया करते थे। इस समय हेस्टिंगसने डिरेक्टरों की राय से यह क़ाइदा उठा कर राज का सारा इन्तिज़ाम अपने हाथ करना चाहा। इस से सन १७७२ में ख़ज़ाना और दूसरे दूसरे बड़े सरिश्ते मुर्शिदाबाद से कलकत्ते में लाये गये। और नाइब दीवान

रज़ाखां का ओहदा एक बारगी एबौलिश हो गया। माल-गुज़ारी तहसीलने के लिये हर ज़िले में एक एक कलेक्टर मुक़र्रर किये गये—कलेक्टरों को पांच पांच बरस के लिये ज़मीन का बन्दोबस्त करने का हुक्म हुआ। मुक़द्दमे फ़ैसल करने के लिये हर ज़िले में दीवानी और फ़ौजदारी दो दो कचहरियां क़ाइम की गईं—दीवानी के मुक़द्दमे कलेक्टर साहिब के और फ़ौजदारी के क़ाज़ी या मुफ़्ती के सुपुर्द होते थे, और इन मुक़द्दमों की अपील के लिये सदर दीवानी और सदर निज़ामत दो कचहरियां कलकत्ते में क़ाइम की गईं। इन काररवाइयों को अच्छी तरह चलाने के लिये हेस्टिंग्स ने छोटे छोटे कई एक आईन भी तय्यार कर दिये थे।

सन १७६१ में अहमदशाह से पानीपत की लड़ाई में हार जाने के सबब से मरहटे कुछ दिनों तक चुपचाप थे। परन्तु फिर १७६९ में मधुराव पेशवा तीन लाख फ़ौज के साथ चम्बल नदी पार उतर कर राजपूत और जाटों की सल्तनतें लूटता दिल्ली में आ पहुंचा और कमज़ोर बादशाह शाहआलम का खूब अपमान कर रोहिलखंड में घुसा। रोहिलों ने इन से बचने के लिये ४० लाख रुपये देने का क़रार कर के शुजाउ-द्दौला को बुलाया। शुजाउद्दौलाने रोहिलों से मिल कर मर-हटों को निकाल बाहर किया, परन्तु जब उन ४० लाख रुपयों को नहीं पाया तो फिर रोहिलों ही से लड़ाई शुरू की (१७७३)। हेस्टिंग्स ने शुजाउद्दौला के लिखने अनुसार धन के लालच में पड़ कर एक अंगरेज़ी पल्टन रोहिलों से लड़ने को भेज

दी। (१७७४) इस लड़ाई में रोहिलों ने पूरी शिकस्त खाई —उन के बीस हज़ार सिपाही खेत रहे—और बहुतेरे रोहिलखंड छोड़ छोड़ कर भाग गये। निदान शुजाउद्दौला ने इस देश की अधिकार करके अपने दिल का अर्मान पूरा किया। फिर अंगरेज़ों ने ५० लाख रुपये लेने का क़ौल क़रार कर कोड़ा और इलाहाबाद के सूबे बादशाह से छीन कर शुजाउद्दौला को दे दिये, और बादशाह को जो २६ लाख रुपये सालाना देने का इक़रारनामा था उसे मुस्तर्द कर दिया।

इन दिनों (१७७३) कम्पनी को जब ख़र्च की बड़ी तंगदस्ती हुई तो इंगलैन्ड के अफ़सरों ने इस देश के राजकाज का नया प्रबन्ध करने का इरादा किया। नीचे लिखे कई एक नियम बनाये गये—१ला। बंगाले का गवर्नर हिन्दुस्तान का गवर्नर जनरल होगा। कलकत्ते में उसके अधीन एक काउन्सिल यानी सभा रहेगी जिसके चार मेम्बर होंगे। बम्बई और मंदराज के गवर्नर, सभा में अधिष्ठित गवर्नर जनरल के अधीन, रहेंगे।—२रा। कलकत्ते में सूप्रीम कोर्ट नाम एक बड़ी अदालत नियत की जायेगी, जिस के जज लोग कम्पनी के अधीन नहीं रहेंगे।—३रा। राजकाज की सब बातें इंगलैन्ड के वज़ीर आज़म के पास पेश की जावेंगी। कम्पनी का कोई नौकर नज़र नज़राना नहीं लेने पायेगा।—वग़ैरह।—इस आईन के जारी होने पर १७७४ में वारन हेस्टिंग्स २॥ लाख रुपये सालाना के मुशाहरे पर गवर्नर जनरल के ओहदे पर और बरवेल, मौन्सन, क्लेवरिंग, और फ्रान्सिस लाख लाख रुपये के मु-

दिखला दी थी। जिस उपाय से खूब धन कमा कर अपने देश में जा बड़े आदमी कहलाइये, सिवा इस बात के किसी का और कोई उद्देश्य न था। सन १७६५ की जनवरी में मीरजाफ़र के मरने पर काउन्सिलवालों ने उस के नाबालिग़ बेटे नुजुमुद्दौला को गद्दी पर बिठा, नज़राने के तौर से बहुत धन लिया। ईस्ट इन्डिया कम्पनी के डिरेक्टर, काउन्सिलवालों के इन गैरवाजिब कामों को सुन सुन कर डरे और इस की दुरुस्ती के वास्ते सिवा क्लाइव के किसी को लाइक़ न पा कर, उसीको फिर इसी साल के मे महीने में हिन्दुस्तान भेजा। क्लाइव ने इंगलैन्ड में बादशाह और वज़ीर वग़ैरह लोगों से बड़ी इज़्ज़त और लौर्ड का खिताब पाया था।

लौर्ड क्लाइव (२री बार)।

१७६५—१७६७।

लौर्ड क्लाइव ने आते ही सब से पहले यह प्रबन्ध किया कि कम्पनी के नौकरों का नज़र नज़राना लेना बंद कराया। फिर इलाहाबाद- जा कर कर्नाक साहिब की छावनी में उतरे हुए शुजाउद्दौला और शाहआलम से मुलाक़ात की। शुजाउद्दौला के यह प्रतिज्ञा करने पर कि अंगरेज़ों के सदा दोस्त रहेंगे, उसको उसका

राज लौटा दिया गया—सिर्फ़ कोड़ा और इलाहाबाद बादशाह के वास्ते रक्खा गया। इसी समय यानी सन १७६५ के १२वीं अगस्त को बादशाह शाहआलम ने सिर्फ़ २६ लाख रुपये सालाना ख़िराज मुक़र्रर करके कम्पनी को बंगाला, बिहार, और उड़ैसे की दिवानी दे डाली। सच पूछो तो कम्पनी ने पहले ही से राजा का पूरा अधिकार अपने हाथ कर रक्खा था, लेकिन अब बादशाह की सनद पाने से उस को यहां राज करने का आईन के अनुसार वाजिब हक़ पैदा हुआ। इस के बाद मुर्शिदाबाद का नव्वाब सिर्फ़ ५० लाख रुपये सालाना पेन्शन पाने लगा। कम्पनी इस समय तक तो सौदागर थी, परन्तु अब राजकाजके प्रवन्ध की तरफ़ झुकी।

इस के बाद क्लाइव फ़ौज के ख़र्च घटाने में मशग़ूल हुआ। पहले फ़ौज का यह इन्तिज़ाम था कि सिपाही जब लड़ाई पर जाते थे, तब मुशाहरे से कुछ ज़ियादे पाते थे। और इस ज़ियादे हिस्से को "डबल भत्ता" कहते थे। क्लाइव ने डबल भत्ता देने का नियम उठा दिया (१७६६)। पहले कम्पनी के सब ही नौकर अपनी अलग अलग तिजारत करते थे—क्लाइव ने इस रीत को भी उठा दिया, और उनका घाटा पुराने के लिये कम्पनी को नमक की तिजारत से जो मुनाफ़ा था, उस में से थोड़ा थोड़ा सब नौकरों को भी देने का नियम रक्खा।

अपने इन कामों को तय करके उसने सन १७६७ में फिर अपने देशको यात्रा की। इसके जारी किये हुए क़ाइदों से जिन जिन लोगों का नफ़ा मारा गया था, वह पा-

देशवासी। इन्हों ने राजा गंभीर साहि ईदर के रईस के भडौवा में एक कवित्त बनाया है उसके सिवाय और कोई कविताई इन की हमने नहीं देखी" ॥ और बेनी कवि के विषय में शिवसिंह का लेख साहित्यलहरी में प्रकाश कर चुका हूं। जोधपुर के मुन्सिफ देवीप्रसादजी महाराज मानसिंह कछवाहे के जीवन चरित्र में एक दोहा पर एक लाख देना लिखते हैं उनका लेख नीचे लिखा जाता है।

"आमेर और रोहतास वग़ैरा में इन महाराज के बनाये हुए अच्छे २ महल मकान और बाग़ अबतक मौजूद हैं और उनकी फैज़ बख़शी की अजब अजब बातें सुनने में आती हैं और उनका हाथ बचपन से ही पोला था उन की पहली शादी अजमेर में गोड़ राजा की बेटी से हुई थी यह राजा भी बड़ा दानी था एक दिन इसने किसी चारण की शायरी से ख़ुश होकर उस को इतना बहुत दिया कि जिस से तमाम राजपूताने में उसका नाम होगया उसकी बेटी ने यह खबर सुनकर अपने महल में बड़ी ख़ुशी की और महाराज के पूंछने पर वह सबहाल बड़ी शेख़ी से अरज़ किया महाराज ने कहा क्या बड़ी बात है राजां लोग दान देते ही रहते हैं रानी ने अर्ज़ की कि महाराज कहने और देने में बड़ा फ़रक है महाराजा उस वक्त तो चुप हो रहे मगर सुबह ही ७ कबीश्वरों को बुलाकर जितना इनाम उनके सुसरे ने एक चारण को दिया था उतना इन्हों ने उन सातों में से एक २ को दिला दिया।

एक कबीश्वर ने किसी आदमी से १०००) रुपया लेकर महाराज के नाम हुंडी लिख दी जब वह उस को लेकर महाराज के पास आया तो महाराज ने फ़ौरन उसका रुपया चुका दिया और हुंडी की पीठ पर उस कबीश्वर को यह दोहा लिख भेजा।

दोहा—इतें हमहुं महाराज हैं , उते आप कबिराज ।
हुंडी लिखत हजार की , नेक न आई लाज ॥ १ ॥

इसी तरह हरनाथ कबीश्वर ने महाराज की तारीफ़ में यह दोहा कहकर सुनाया।

दोहा—बल बोई कीरत लता , करण करी द्वै पात ।
सींची मान महीप ने , जब देखी कुमिलात ॥ २ ॥

महाराज ने उस को १०००००) रु० इनायत किया और ऐसी २ और भी बहुत सी बख़शिशें की कि जिन से उन का नाम हिन्दुस्तान के सख़ी और दातार और अमीरों की फिहरिस्त में दाख़िल किया गया है।

उन की जिन्दगी के हाल में एक किताब मान भारत के नाम से मशहूर है।"

शाहजहां बादशाह ने गोस्वामीजी से कहलाया था कि जो कुछ मांगे मैं दूं उसपर गोस्वामीजी ने उत्तर कांड का २८ वां कवित्त बनाया।

एक बार तुलसीदासजी के स्थान में कईएक प्रधान व्यक्ति, पण्डित और कवि इकट्ठे हुए थे। उन में से किसी से कुछ बात न की, न किसी का कुछ सम्मान किया, किंतु पीछे टोडरमल्ल (३) नाम एक व्यक्ति के आने पर उस का सम्मान भी किया और उन से बात चीत भी की। इस पर उन लोगों ने स्वामीजी पर कुछ अप्रसन्नता प्रकट की तब गोस्वामीजी ने उत्तर कांड का ३३। ३४। ३५ का कवित्त बनाया।

टोडरमल्ल के मरने पर किसी ने गोस्वामी तुलसीदासजी से कहा था कि टोडर मर गये तब उस के उत्तर में आप ने उत्तर कांड का ३६ वां कवित्त बनाया।

नैन कवि वा नैनसुख (४) कवि ने गोस्वामी तुलसीदासजी से पूछा था

---

(३) टोडरमल्ल नामक एक प्रसिद्ध भक्त बनारस में प्रायः तुलसीदासजी के साथ रहते थे और हरिभजन किया करते थे जिन के लड़के के झगड़े में गोसाईं तुलसीदासजी पंचनामा पर श्लोक और दोहा लिखे हैं उन के मरने पर तुलसीदासजी ने निम्न लिखित दोहा बनाया था। महतो चारो गांव को, मन को बड़ो महीप ।

तुलसी या कलिकाल में, अथये टोडर दीप ॥ १ ॥
तुलसी राम सनेह को, सिर धर भारी भार ।
टोडर धेरे न कांधहू, जग कर रहे उतार ॥ २ ॥
तुलसी के हिय बिमल थल, टोडर गुन गन बाग ।
समुझि सुलोचन सींचिहैं, उमगि उमगि अनुराग ॥ ३ ॥
रामधाम टोडर गये, तुलसी भये निसोच ।
जियबो मीत पुनीत बिनु, यहै बडे संकोच ॥ ४ ॥

(४) मालूम नहीं कि नैन कवि कौन थे। शिवसिंहसरोज में नैन कवि का नाम है परंतु और कुछ वृत्तांत नहीं है केवल निम्न लिखित कविता उन के नाम से लिखी है। "प्रबलप्रचंड चंड कर की किरनि देखो बेहर उदंड नवखंड घुमिलत है। अवनि कराही कै सो तेल रतनाकर सो नैन कवि ज्वाल की जहर उगिलत है ॥ ग्रीषम की ज्वाल जाल कठिन कराल यह काल ज्वालामुखि हू की देह पछिलत है। लूका भयो आसमान भूधर भभूका भयो भभकि भभकि भूमि दावा उगिलत है ॥ १ ॥"

कि संसार में जीने का क्या फल है इसी पर गोस्वामी जी ने उत्तरकांड का ३७वां कवित्त बनाया। कोई२ कहते हैं कि उन ने समस्या दी थी कि (यतनो जगजीवन को फलु है)। तब गोस्वामीजी ने उत्तरकांड का ३७ वां कवित्त बनाया।

नैनसुख कवि का वृत्तांत जो कुछ मालूम हुआ वह नीचे लिखा जाता है।

वैद्यमनोत्सव के प्रारंभ में लिखा है।—

दोहा—शिवसुतपद प्रणमो सदा, रिद्ध सिद्ध दातार।
कुमति बिनाशन सुमति कर, मंगल मुदित अपार॥ १॥
अलख अमूरति अलख गति, किनहिं न पायोपार।
जोर जुगल कर कवि कहै, देय देव मतिसार॥ २॥
वैद्यग्रन्थ सब मथन कर, रच्यौ सुभाषा आन।
अर्थ दिखायो प्रगट कर, औषध रोग निदान॥ ३॥
मम मति अल्प जो कहति हौं, कबि मति परम अगाध।
सुगम चिकित्सा चित रचित, छमहु सबै अपराध॥ ४॥
वैद्यमनोत्सव नाम धर, देखि ग्रंथ सु प्रकाश।
केशवराजसुत नैनसुख, भाषा कियो बिलाश॥ ५॥
प्रथम नाडि लक्षण कहो, देखि ग्रंथ मति सोय।
पुनि आनो अनुतावही, जैसीये मति होय॥ ६॥

वैद्यमनोत्सव के अंत में लिखा है।—

दोहा—परमित ग्रंथ समुद्र सग, मम मति खोजत पार।
औषध रतन जिते गहे, किया प्रगट संसार॥
वैद्यमनोत्सव ग्रंथ में, कहेउ सलिल निज आन।
दुखद दलन सब सुखकरन, आनंद परम निधान॥
केशवराजसुत नैनसुख, कह्यो ग्रंथ सुखकंद।
शुभ नगरी सो नंद माहि, अकबर शाह नरिंद॥
अंक बेद रस मेदनी, शुक्ल पक्ष शुभ वार।
तिथि द्वितिया भृगु बार पुनि, पुष्य नक्षत्र प्रकार॥
मात्रा अक्षर छन्द कहीं, रहि जु अल्प मति मोइ।
गुनिजन सबै सम्हारिये, हीन जहां कछु होइ॥

सुंदर कविराय के विषय में कुछ साहित्यलहरी के उपक्रम में लिखा है और उस के सिवाय जो कुछ जाना गया है नीचे लिखा जाता है।

शाहजहां के जीवनचरित्र में मुन्शी देवीप्रसाद कायस्थ ने लिखा है।

सावण सुदी ३ संवत १६८७ से सावण सुदी २ संवत १६८८ तक।

पीरा उज्जैन और सिरोंज हो कर बुंदेलों के मुल्क में कालपी तक पहुंचा अबदुल्लाखां और मुज़फ्फ़र खां उस के पीछे थे पहिले ये पीरा जब आगरे से भागा था तो जुझार सिंघ के बेटे बिक्रमाजीत ने उस को अपने मुल्क में रस्ता दे दिया था जिस से वह दक्खिन पहुंच गया था और इस सबब से जुझार सिंह के ऊपर बादशाह की बड़ी खफ़गी हुई थी अब जो पीरा फिर इधर आया तो बिक्रमाजीत ने वह पिछली शरमिंदगी मिटाने के लिये मंगसिर बदी ३ को उस का पीछा किया और उस के चंदावल याने पिछले लशकर के सरदार दरयाखां को जा मिलाया दरयाखां को तो बड़ा गरूर था वह कब बुंदेलों को ख्याल में लाता था फ़ौरन बाग मोड़ कर बिक्रमाजीत के ऊपर आया मगर १ गोली ने उस का काम तमाम कर दिया और उस का बेटा भी उसी जगह मारा गया बुंदेले दरया को पीरा समझ कर सब उसी के ऊपर टूट पड़े और पीरा फुरसत पा कर निकल गया बिक्रमाजीत ने दरया का सिर बादशाह के पास भेजा इस लड़ाई में ४०० पठान और २०० बुंदेले मारे गये बादशाह ने बिक्रमाजीत को जुगराज पदवी दे कर एक दम से हज़ारी जात और १००० सवारों का इज़ाफ़ा कर दिया जिस से उस का मनसब दूनां होगया और सुन्दर ब्राह्मण कवि राय के हाथ उस के वास्ते खिल्अत तलवार जड़ाऊ झंडा और नक्कारा भेजा।

आसाढ़ सुदी २ सम्बत् १६९१ से आसाढ़ सुदी २ से १६९२ तक।

चैत बदी १ को बादशाह दिल्ली में दाखिल हुए।

चैत बदी ६ को जमना के किनारे घाट स्वामी में अबदुल्ला खां फ़ीरोज़ जंग सूबेदार बिहार जो रतनपुर के ज़िमींदार की सज़ा देने के वास्ते गया था हाज़िर आया वहां के राजा बाबू लछमन और दूसरे ज़मींदारों को साथ लाया जिन्हों ने बादशाह को नज़रें दीं।

रतनपुर की मुहिम का कुछ हाल—जब कि अबदुल्ला खां भागा घाटी से ४ कोस इधर पहुंचा जहां से रतनपुर ६० कोस रहता है तो बांधोगढ़ का राजाअमर सिंघ अपने लशकर के साथ उस से आमिला जब उस घाटी मे पहुंचे तो वहां के